सिद्धयोग

संस्थापक :
योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

एक प्रति : रु. 20
द्विवार्षिक : रु. 320

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन सवाँई-283202 (आगरा) उ.प्र.

वर्ष : 48, अंक :
फरवरी-मार्च 20

अमृतकण

प्रणवो धनु: शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्।।

मुण्डकोपनिषद् 2/4

यहाँ ओंकार ही धनुष है, आत्मा ही बाण है और परब्रह्म परमेश्वर ही उसका लक्ष्य कहा जाता है। वह प्रमाद रहित मनुष्य द्वारा ही बींधा जाने योग्य है। अत: उसे बेधकर बाण की तरह उस लक्ष्य में तन्मय हो जाना चाहिये।

• • •

य: शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारत:।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।

(गीता 16/23)

जो वेद शास्त्र विहित विधि को छोड़कर (कामना से प्रेरित होकर) मनमाना काम करते हैं, उनको न तो फल की सिद्धि होती है, न सुख मिलता है, न मोक्ष की ही प्राप्ति होती है।

• • •

मामुपेत्य पुनर्जन्म दु:खालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मान: संसिद्धिं परमां गता:।।

(गीता 8/15)

श्री भगवान के शरणापन्न होने पर दुखों के कारणभूत क्षणभंगुर पुनर्जन्म को अर्थात् संसार को महापुरुष प्राप्त नहीं होते। परम सिद्धि अर्थात् भगवत्–लोक को प्राप्त कर लेते हैं। वहां से फिर संसार में आना ही नहीं होता।

• • •

योगयुक्त्या तु तद्भस्म दलाव्यमानं समन्तत:।
शाक्तेनामृतवर्षेण ह्यधिकारान्निवर्तते।।

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

वर्ष :48
अंक : 11

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्यौमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्त्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

फरवरी
मार्च
2016

श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये।।

मन से श्रीराम चरणों का चिन्तन, वचन से श्रीरामचरणों का गुणगान, सिर से श्रीरामचरणों में नमन और अन्ततः उन्हीं चरणों की शरण लेता हूँ।

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सवांई (एत्मादपुर) आगरा

SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग–योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :
आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक :
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष
एवं गुरु भाई–बहिन

इस अंक में ...

1.	विशेष लेख – योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज	3
2.	सम्पादकीय	10
3.	यथा अन्नं तथा मनः – श्री दिनेश चन्द शर्मा	13
4.	कालीय–दमन लीला – श्री स्वामी सरस्वती जी महाराज	17
5.	योग–आसन	23
6.	गुरु वन्दना – श्री आशुतोष मिश्र	25
7.	फुल तुम ना बने – श्री विजय शर्मा	28
8.	जै–जै राम रघुराई – श्रीमती शारदा सिसौदिया	29
9.	सदगुरु महिमा – कन्हैया लाल शास्त्री	30
10.	सिद्धयोग मासिक पत्रिका का विवरण–फार्म नं–प	31
11.	बार–बार प्राण रक्षा – श्री जगदीश राए बंसल	32
12.	आय–व्यय का विवरण वर्ष 2015–2016	37
13.	सहयोग राशि दाताओं का सूची	38
14.	आश्रम समाचार	39
15.	रामनवमी महोत्सव व श्री प्रभुजी की जयन्ती समारोह	40

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 170.00
द्विवार्षिक	: रु. 320.00
आजीवन (10 वर्षीय केवल)	: रु.1000.00

• विशेष लेख

सच्चा अहिंसक कौन ?

योग–योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

योग मार्ग की उपासना में और संसार की अन्य उपासनाओं में यही अन्तर है कि योग साधना में साधक साधना करता है किंतु उसका लक्ष्य यही नहीं होता कि वह किसी देवी देवता की पूजा करके उनसे कोई वरदान लेना चाहता है। उसका लक्ष्य तो केवल मात्र इतना ही होता है कि वह अपने आपको उस तत्व में लय कर देना चाहता है जिसका वह ध्यान करता है। मैंने प्रातः काल गीता प्रवचन के समय भगवान के द्वारा अष्टधा प्रकृति का वर्णन किया था। भगवान के शब्दों में–

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनोबुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।

ये आठ प्रकृति पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश, मन बुद्धि और अहंकार हैं– ये अपरा प्रकृति हैं। इनमें पंचभूतों में सर्वप्रथम पृथ्वी तत्व है। पृथ्वी तत्व का साक्षात्कार करने वाला योगी गन्ध तन्मात्रा की सीमा तक पहुँचता है। जल तत्व का साक्षात्कार करने वाला रस तन्मात्रा की सीमा तक पहुँचता है, अग्नि तत्व का साक्षात्कार करने वाला रूप तन्मात्र की सीमा तक पहुँचता है। उसके बाद वायु तत्व का साक्षात्कार करने वाला शब्द तन्मात्र की सीमा तक पहुँचता है और उसके बाद मन और बुद्धि तत्वों को पूर्णतया जानकर फिर आत्मतत्व का साक्षात्कार कर लेता है। भगवान ने गीता में इस प्रकार से अपनी अष्टधा अपरा प्रकृति का वर्णन किया है। ये सब साधना योग है। मनुष्य इन तत्वों का साक्षात्कार करने के लिये ध्यान योग का सहारा लेता है। इसके लिये उसे सर्वप्रथम धारणा का अभ्यास करना पड़ता है। धारणा, ध्यान के विषय में मैं तुम्हें अपने व्याख्यानों में बताता रहता हूँ। **'देशबन्धचित्तस्य धारणा'** अपने चित्त को एक लक्ष्य स्थान पर केन्द्रित करना धारणा कहलाता है। मैंने तुम्हें वैशेषिक दर्शन के अनुसार मन का लक्षण कई बार बतलाया है।

'युगपद्ज्ञानातुपत्तिर्मनसोलिङ्गम्' एक समय में जिसको अनेक ज्ञान नहीं होते हैं वह मन कहलाता है। मन ज्ञानेन्द्रिय के द्वारा एक समय में एक विषय का ज्ञान प्राप्त करता है इसके बाद दूसरी ज्ञानेन्द्रिय उसे अपनी ओर आकर्षित करती है, फिर उसे दूसरे विषय का ज्ञान होने लगता है। इस प्रकार से मनुष्य का मन रात–दिन भिन्न–भिन्न प्रकार के चिन्तनों के अन्दर लगा रहता है। इसलिए मनुष्य मन की ताकत को पा नहीं सकता। योगियों ने वह रास्ता ढूँढा है जिसमें मन की ताकत की पहचान होती है। मन बहुत शक्तिमान है। साधारण अवस्था में मन चंचल रहा करता है। किंतु जब वह एक स्थान पर एकाग्र हो जाये तो उसमें अद्भुत शक्ति आ

जाती है। जिससे मनुष्य सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। भगवान पतंजलि देव ने अष्टांग योग का वर्णन किया है। यम नियम से लेकर समाधि तक आठ अंग हैं। यम से लेकर प्रत्याहार तक पाँच बहरंग हैं। उनमें अन्तर्मुखी वृत्ति की आवश्यकता नहीं। मनुष्य बाहर से भी साधना करता हुआ लक्ष्य की ओर बढ़ सकता है। यम–नियमों की साधना की आवश्यकता इसलिए पड़ती है, ताकि साधक अपने मन की वृत्तियों को पूर्ण पवित्र बना ले और मन में किसी प्रकार का विकार न रहे। यमों के अन्तर्गत पहला यम अहिंसा है, अहिंसा व्रत के पालन का परिणाम है–

'अहिंसा प्रतिष्ठायाम् तत्संनिधौ वैरत्यागः' अर्थात् जो किसी को दुःख नहीं देना चाहता उसके सम्पर्क में आने वाले हिंसक प्राणी भी वैर भाव छोड़ देते हैं। हमारे प्राचीन हिन्दु जाति के अन्दर जो लोग धर्म प्रधान होते हैं, उनमें अहिंसा का माद्दा होता है। उनसे कह दिया जाये कि वे किसी को पीट दें, मार दें, तो वे ऐसा नहीं कर सकते।

किंतु यह भी पूर्णरूप से अहिंसा नहीं है। जो लोग कमर्णा, मनसा, वाचा किसी की हिंसा नहीं करते, करना नहीं चाहते वे ही अन्ततः सच्चे अहिंसक बनते हैं। जैनियों का सिद्धान्त रहता है **'अहिंसा परमोधर्मः'** अहिंसा परम धर्म है। भगवान बुद्धदेव ने भी अहिंसा का बहुत बड़ा प्रचार किया। जैन मुनि अपने मुँह पर भी कपड़े की पट्टी बांध लेते हैं। ताकि उनके श्वास–प्रश्वास से छोटे–छोटे कीटाणु भी न मरें। यह उनकी अहिंसा व्रत का परिचायक है। वैसे तो हजारों जीव हमारे हाथ पैर आदि हिलाने तथा मल–मूत्रादि त्यागने से मर जाया करते हैं। उनकी रक्षा की ही नहीं जा सकती, किसी उपाय से उनकी रक्षा नहीं हो पाती। जो लोग इस प्रकार से अहिंसा व्रत को धारण करने वाले हैं, विचार किया जाये कि क्या वे सच्चे अर्थों में अहिंसक हैं? किसी प्रकार से उनके मन में उद्वेग पैदा कर दिया जाये तो वे लोग मरने मारने को तैयार हो जाते हैं। इसलिए उन लोगों से भी पूर्णरूप से अहिंसा का पालन नहीं होता है। हर व्यक्ति से अहिंसा का पालन नहीं हो सकता। जब तक मनुष्य द्वैत–दर्शन करता है तब तक वह अहिंसक नहीं बन सकता। **'मुण्डे–मुण्डे मतिर्भिन्ना:'** हरेक व्यक्ति के मन में न्यारी–न्यारी मतियाँ होती हैं, इसलिए एक दूसरे की बात उसे पसन्द नहीं आती। हमारा योगदर्शन यह बतलाता है कि मनुष्य अपने जीवन में दुःखों से छूट नहीं पाता वह उनसे छूटने का उपाय करता है किंतु दुःख उसे लगे रहते हैं। योगदर्शन का सूत्र है–परिणामताप संस्कार–**'दुःखैः गुणवृत्ति विरोधाच्च सर्वमेव दुःखम् विवेकिनः'**। कुछ परिणामी दुःख है, कुछ तापज दुःख है तथा कुछ संस्कार दुःख होते हैं। उतावले में ऐसा कोई काम कर दिया जिसके लिए बार–बार पछताना पड़े। ऐसा परिणामी दुःख होता है। कुछ तापज दुःख होते हैं। ऐसा कोई कर्म कर बैठता है जिसके परिणाम में वह तपता रहता है। मन में कोई संस्कार बैठ जाता है वह मन से निकलता नहीं है। ऐसा संस्कारी दुःख होता है। किसी के मन में भय के संस्कार आ जाते हैं। या और किसी प्रकार से भ्रम के संस्कार आ जाते हैं। इसके साथ–साथ एक और बहुत बड़ा दुःख है वह है गुणवृत्ति विरोध का। संसार में

ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होगा जिसका किसी से गुणवृत्ति विरोध न हो। किसी का स्वभाव कैसा है तो किसी का कैसा? सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण ये त्रिगुणात्मक स्वभाव मनुष्य के होते हैं। परमात्मा की इतनी विचित्र शक्ति है– इन तीनों का ऐसा विचित्र बंटवारा किया है कि किसी का भी स्वभाव संसार में एक दूसरे से नहीं मिलता। एक बात होती है, छोटी शक्ति बड़ी शक्ति के आधीन रहती है। पिता कहता है तू मेरा पुत्र है, तू मेरी आज्ञा का पालन कर। पुत्र अपना धर्म मानकर आज्ञा का पालन करता है किंतु उसे पिता की सारी हरकतें पसन्द नहीं आती। गुरुदेव शिष्य को आज्ञा देते हैं, तुम ऐसा करो। शिष्य आज्ञा का पालन करते हैं किंतु कोई–कोई शिष्य ऐसे भी होते हैं जो अपने मन में सोचते हैं कि गुरुदेव ने यह आज्ञा दी, ऐसी आज्ञा नहीं देनी चाहिए। पति और पत्नी में यद्यपि अभेद सम्बन्ध होता है किंतु वृत्तियाँ पति पत्नी की भी अलग–अलग होती हैं। उनका भी स्वभाव नहीं मिलता। संसार में इतने मित्र हैं, प्रेमी हैं किंतु स्वभाव किसी दूसरे से नहीं मिलता। किसी का आपस में सच्चा प्रेम नहीं होता। आपस में विकल्प रहा करता है। बड़े–बड़े विद्वानों का भी आपस में गुणवृत्तिविरोध रहा करता है। मनुष्य जीवन में गुणवृत्तिविरोध का दुःख बहुत बड़ा दुःख है। दुःख द्वैत में रहा करता है। जहाँ द्वैत भासता है वहाँ विरोध रहता है। मैंने तुम्हें कई बार अपने व्याख्यानों में बतलाया है कि यम–नियम का पालन योगी के जीवन में अवश्य होना चाहिए। यदि कोई एक भी यम–नियम का पालन कर लेता है तो वह धीरे–धीरे मुक्ति के द्वार तक पहुँच जाया करता है। यदि योगी अहिंसा व्रत का ही पालन करना शुरू कर दे तो योग समाधि की ओर बढ़ जाता है।

किसी को मारना–पीटना ही हिंसा नहीं कहलाता। मनसा, वाचा, कर्मणा तीनों प्रकार से हिंसा होती है। यदि कोई किसी को कड़वी वाणी बोलता है तो उससे दूसरे के मन में क्षोभ होता है। यह डण्डा मार देने से भी ज्यादा दुःख देता है। जिसके लिए कड़वी वाणी का प्रयोग होता है उसके मन में उद्वेग होता रहता है। उसके मन में प्रतिकार की भावना बनी रहती है वह सोचता रहता है कि इसने मुझे ऐसा कहा है, समय आने पर इसका अवश्य बदला लूंगा। इसलिए जो मनसा, वाचा, कर्मणा किसी को भी दुःख देना नहीं चाहता वह सच्चा अहिंसक होता है किंतु ऐसा अहिंसक योग–समाधि में पहुँचकर ही बन पाता है, अन्यथा सब हिंसक ही होते हैं।

दिल्ली में एक बार विश्वयोग सम्मेलन हुआ था उसमें हमें भी बुलाया गया था। उसमें जैन मुनि सुशील कुमारजी भी आये थे। वे जैन–मुनि कहलाते हैं। विचार उनके बहुत अच्छे हैं। उस सम्मेलन में एक सवाल उठा कि योग–यूनिवर्सिटी कहाँ कायम की जाये? सम्मेलन के अध्यक्ष विदेशी थे उनका नाम क्रिस्टोफर हिल था। उनका मानना था कि योग यूनिवर्सिटी भारत से बाहर किसी अन्य देश में स्थापित की जाये। मुझे भी बोलने का अवसर मिला मैंने कहा–योग भारत की प्राचीनतम विद्या है। मैं सत्य कहता हूँ जितने भी विदेशी यहाँ बैठे हुए हैं उनमें कोई भी योग की ठीक–ठीक परिभाषा बतला दे। मैंने कहा–योग यहाँ के ऋषियों की चीज है। इसलिए योग यूनिवर्सिटी भारत में ही होनी चाहिए। यदि इसका थोड़ा बहुत प्रचार विदेशों में भी हुआ तो

वह यहीं से गया है। हमारे शास्त्रों का लेख है–

एतददेशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन:।

भारतवर्ष के तपस्वियों से, ब्राह्मणों से ज्ञान–विज्ञान सारे विश्व में फैलता है। संसार के लोग यहाँ के विद्वानों से, योगियों से उस ज्ञान को प्राप्त करते हैं। उस सम्मेलन में एक और भी प्रस्ताव आया। वह किया था सुशील कुमार जैन ने। वे कहने लगे– इस विश्वविद्यालय का नाम योग यूनिवर्सिटी क्यों रखा जाये। इसका नाम अहिंसा–यूनिवर्सिटी होना चाहिए। निर्णय–समिति के हम सात सदस्य थे। कनखल वाले महामण्डलेश्वर स्वामी प्रकाशानन्द जी तथा अन्य कई प्रतिष्ठित योगी थे। जब प्रस्ताव आया कि इस विश्वविद्यालय का नाम योग विश्वविद्यालय ही क्यों हो? इस पर कमेटी के सदस्य मेरी ओर देखने लगे कि मैं इसका जवाब दूँ। मैंने उत्तर दिया– इसका नाम अहिंसा यूनिवर्सिटी नहीं योग यूनिवर्सिटी ही होना चाहिए। अहिंसा योग का एक अंग है। योग अंगी है। अंगी के अन्दर अंग अपने आप आ जाता है। किसी को हम बुलाते हैं इधर आओ। तो उसके साथ में ही उसके हाथ भी आयेंगे, पैर भी आयेंगे, वे सब अपने आप उसके साथ आ जायेंगे। क्योंकि ये सब उसके अंग हैं। इसलिए इस यूनिवर्सिटी का नाम योग यूनिवर्सिटी होना चाहिए। अहिंसा यूनिवर्सिटी नहीं। अस्तु। मैं जो बात तुम्हें समझा रहा था वह यह थी कि यदि मनुष्य अहिंसा का पूर्णव्रती बन जाता है– पूर्णरूपेण अहिंसक हो जाता है, तो उसके लिये हमारे योग शास्त्र में लेख है– **अहिंसा प्रतिष्ठाया तत्संनिधौ वैरत्याग:।** अहिंसा में पूर्ण प्रतिष्ठित हो जाने पर हिंसक जीव भी वैरभाव त्याग देते हैं। जिन साधकों के अन्दर महाभावों का उदय हो जाता है। उनमें तेज ही तेज रहा करता है। आनन्दानुगत समाधि के अन्दर महाभावों का उदय होता है। जिसका वे ध्यान करते हैं, वे सर्वत्र दिखाई दिया करते हैं–

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।

आनन्दानुगत में योगी सर्वत्र तेज ही तेज देखा करता है।

'सर्वभूतस्थमात्मान सर्वभूतानि च आत्मानि'

प्राणीमात्र को जो अपने अन्दर देखता है और प्राणीमात्र में जो अपने को देखता है ऐसा योग युक्तात्मा योगी सम दर्शन वाला होता है। वहाँ पर होता है अद्वैत। योगी देखता है, इसमें भी मैं हूँ, सर्वत्र मैं ही हूँ ऐसा देखा करता है। योगी ऐसा कथन मात्र या भावना मात्र से नहीं यथार्थ में देखता है। योग समाधि में ऐसी अनुभूति होती है! अस्मितानुगत समाधि में योग अपने हजारों चित्त बनाकर हजारो के पास एक साथ चले जाते हैं। वह बात और है किंतु अपनी आत्मसत्ता के अन्दर सबको देखना और बात है। ऐसा योगी सर्वत्र समदर्शन वाला होता है। वह सर्वत्र अपनी सत्ता को देख रहा है। फिर वह किस से विरोध करेगा? **'तत्र क: मोह: क: शोक: एकत्वमनुपश्यत:'** एकत्व दर्शन करने वाले योगी को मोह (द्वेष) और शोक कहाँ? वस्तुत: ऐसी स्थिति में पहुँचकर ही योगी सच्चा अहिंसक होता है या जहाँ पर महाभावों का उदय हो जाता है,

वहाँ पर भी वह पूर्ण अहिंसक बन जाता है। महाभावों का उदय कहाँ होता है? देखो! अभी मैं साधन योग की बात कर रहा हूँ सिद्धयोग की नहीं। आज के व्याख्यान का प्रकरण कुछ इस प्रकार का चल पड़ा है, मैं तुम्हें बताना यह चाह रहा हूँ कि योगी को पहले यम–नियमों की साधना कर लेनी चाहिए। क्योंकि ऐसा न करने पर योगी के रास्ते में अन्तराय आ जाया करते हैं। **'काम एष क्रोध: एष रजोगुणसमुद्भव:'** यम–नियम का पालन करने वाले के मार्ग में बाधायें नहीं आती। अहिंसा व्रत का मनसा, वाचा, कर्मणा का पालन करने वाले को कामनायें बाधा नहीं पहुँचा पाती। देखो! तुम किसी को कटु वाणी बोलते हो। दूसरा व्यक्ति उसका उत्तर नहीं देता। वाणी से कुछ नहीं कहता क्योंकि तुम धनवान हो, बलवान हो, ताकत वाले हो किंतु उसके मन में दु:ख तो होता ही है। और यदि वह कमजोर मन वाला है तो कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा अन्यथा मन की ताकत वाला है तो बाहर से कुछ न कहने पर भी उसका मन अपना प्रभाव कर जायेगा। मैं तुम्हें अमृतसर में पढ़ने वाले दो विद्यार्थियों की घटना सुनाया करता हूँ। इनमें से एक श्री प्रभुजी का योग दीक्षित बच्चा था। दूसरे लड़के के द्वारा उसकी पुस्तकें चुराये जाने के कारण मन के क्षुब्ध होने से चुराने वाले लड़के की विक्षिप्तता के बारे में मैं तुम्हें बताया करता हूँ। उस लड़के के पागल हो जाने पर प्रभुजी ने कहा था–देखो! यह हिंसा हो गई। योगी को इतना क्रोध नहीं करना चाहिए। यदि मन ताकत वाला है तो इस प्रकार से मनसहिंसा हो जाया करती है। इसलिये जो व्यक्ति ध्यानाभ्यासी है उसे दूसरे का अहित चिन्तन नहीं करना चाहिए। क्योंकि उसके चिन्तनमात्र से दूसरे का अनिष्ट हो जाया करता है। तुमने हरिहरानन्द जी की घटना कई बार मुझ से सुनी होगी। हरिहरानन्द श्रीप्रभु जी के बच्चे हैं जो आज भी शीशगिरी पहाड़ी पर समाधिस्थ हैं। तीन महीने में समाधि से उठा करते हैं। हरिद्वार में एक बार कुम्भ के मौके पर सभी गुरुभाई बहिन हठ करने लगे कि हरिहरानन्द के दर्शन करा दें। श्री प्रभुजी **'अमानी मानद: मान्य:'** हैं वे अपने बच्चों को मान दिया करते हैं। प्रभुजी ने कहा– तुम ध्यान में बैठकर उनसे कह दो–श्री प्रभुजी का हुकुम है चले आओ। वे समाधि से उठकर चले आये। वे ध्यान के नशे में 'नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन–रात जब योग आनन्दानुगत समाधि में होता है तो उसमें महाभावों का उदय हो जाया करता है। उसे कुछ भी सुध–बुध नहीं रहती।

हरिहरानन्द जी पहाड़ से उतरते हुये एक गाँव के पास किसी वृक्ष के नीचे बैठ गये। नवयुवक थे ही। जब योगी समाधि लगाता है तो उसके शरीर की वही अवस्था रहती है जो समाधि से पहले होती है। क्यों? वह खानपान करता नहीं है, मल–मूत्र का त्याग नहीं करता, सोता नहीं है केवल खेचरादि की क्रियाओं से अमृतपान करते रहते हैं। हरिहरानन्द ध्यानावस्था में ही वृक्ष के नीचे लेटे हुये थे। एक ठाकुर साहब आये। वह क्रोधी, अहंकारी स्वभाव का था। हरिहरानन्द से कहने लगा–अरे! नाग पड़ा है यहाँ पर? उठ यहाँ से। जब उन्होंने बात नहीं सुनी तो उनके शरीर पर तीन–चार बेंत मार दिये। चोट लगते ही वे समाधि से उठे– उसे देखकर कहने लगे– अच्छा! तू ही गिर जा, इसी समय। वह वहीं गिर गया और उसका शरीरान्त हो गया।

श्री प्रभुजी हरिद्वार में भोजन कर रहे थे। वे कहने लगे— अरे, अरे देखो! हरिहरानन्द ने यह क्या कर दिया। मैंने पहले ही कहा था कि वह यहाँ आने लायक नहीं है। अब उससे कह दो वहीं वापिस चला जाये। हमारे कुछ गुरु भाई गये और वहाँ जाकर सारी हकीकत देखी। उन्हें श्री प्रभुजी की वापिस जाने की आज्ञा सुनाकर वापिस भेज दिया। यह क्यों हुआ? यह यूँ हुआ— सिद्धान्त है **'वृत्तिसारूप्यमितरत्र'** योगी जब समाधि से उठ जाता है तब वह अपनी मूल वृत्ति के अनुसार चेष्टा करता है। **'सदृशं चेष्टते स्वस्या प्रकृतेर्ज्ञानवानपि'** ज्ञानी लोग भी अपनी प्रकृति के अनुसार वर्तते हैं। श्री प्रभुजी कहा करते थे जो लोग गुरुदेव के थपेड़े खाकर यम–नियमों की साधना नहीं करते वे उल्टे–पुल्टे काम किया करते हैं। और अपने आप को पतन की ओर ले जाया करते हैं। वे किसी को शाप देंगे, मार देंगे। इससे उनका पुण्य क्षीण हो जायेगा। जो दण्ड देने लायक नहीं है उनको भी दण्ड देने पर तो पुण्य क्षीण होगा ही होगा। इसलिये योग–दर्शन में भगवान पतंजलि देव जी ने सर्वप्रथम यम–नियमों की साधना का उपदेश दिया है। उनमें यमों के अन्दर अहिंसा को सर्वप्रथम रखा। अहिंसा व्रत का पालन करने वाला मनसा, वाचा, कर्मणा किसी को दुःख नहीं देता। तुमने गौरांग महाप्रभु की एक घटना सुनी होगी। गौरांग महाप्रभु नदी से स्नान करके आ रहे थे। रास्ते में एक मुसलमान ने उन पर थूक दिया। वह दोबारा स्नान करने चले गये। इस प्रकार वह मुसलमान उन पर कई बार थूकता रहा और वे नहाते रहे। सौ बार जब ऐसा हुआ तो उनकी अहिंसक व अक्रोध वृत्ति से प्रभावित होकर वह मुसलमान उनका अनन्य भक्त बन गया। मुझे श्री प्रभु से सम्बन्धित घटना याद आई। एक बार श्री प्रभुजी ऋषिकेश से आगे ब्रह्मपुरी के जंगलों में अपने शिष्यों के साथ घूमने गये। श्री प्रभुजी ने पहले कभी वहाँ निवास किया था। आजकल तो ब्रह्मपुरी में भी पक्के आश्रम आदि बन गये हैं। हमारे गुरु भाई श्री मुल्खराज जी भी श्री प्रभुजी के साथ थे। वे तुरीयस्थिति में रहा करते थे। महाभावों का उदय उनके अन्दर हो चुका था। उनकी स्थिति यह थी—

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।

वे हर जगह रोम–रोम में श्री प्रभुजी के दर्शन किया करते थे। स्वयं भी ध्यान करते–करते उनमें लय हो जाया करते। वे देखते थे कि उनकी चार भुजायें हो गई हैं। वहाँ जंगल में जाते हुये सामने से एक चीता निकल आया। हमारे गुरु भाई बहिन घबरा से गये और कहने लगे– 'प्रभु जी! चीता आ गया, चीता आ गया श्री प्रभुजी ने मुल्खराज जी से कहा– 'राजे! देखो यह क्या आ रहा है' मुल्खराज जी झट से चीते के पास पहुँच गये और उस पर हाथ फेरने लगे व प्यार करने लगे। फिर कहने लगे– प्रभुजी! आपका बच्चा है, आपका बच्चा है। यूँ ही बार–बार कहते रहे। प्रभुजी कहने लगे– 'राजे! इसे छोड़ दे। थोड़ी देर में चीता अपने आप दूर चला गया। इसे कहते हैं– **'अहिंसाप्रतिष्ठायाम् तत्संनिधौ वैरत्यागः।'** जिनकी अहिंसा व्रत पर पूर्ण प्रतिष्ठा हो जाती है वे ही ऐसा कर सकते हैं। किंतु यह स्थिति बिना योग समाधि के नहीं

आया करती। तुमने भगवान शंकर के चित्र देखे ही हैं। उनके शरीर पर अनेक साँप लिपटे रहते हैं। यह उनकी अहिंसा वृत्ति के कारण है। ब्र. गोपालानन्द जी जब श्री प्रभुजी के पास आ गये तो पीछे से उनके पिता जी उन्हें लेने के लिये आ गये। उस समय ब्रह्मचारी जी का नाम राम गोपाल था। वह (पिता) प्रभुजी के पास आकर कहने लगे– 'महाराज! हमारा एक ही लड़का है। आप इसे घर वापिस भेज दें।' श्री प्रभुजी कहने लगे तुम्हारा लड़का है, तुम उसे अपने साथ लिवा ले जाओ। उस समय ब्र. गोपालानन्दजी ध्यान में बैठे हुये थे। जब उनके पिताजी उस कमरे में पहुँचे तो देखा कि एक भयंकर काला सर्प उनके शरीर पर घूम रहा है। दो तीन बार पिता ने अपने लड़के के पास जाने की कोशिश की किंतु सर्प फुँसकार मारता रहा। ब्रह्मचारीजी के पिता गोविन्दशरण सोचने लगे। आश्चर्य की बात है यह भयंकर सर्प मेरे लड़के को कुछ नहीं कर रहा है और मुझे काटने को दौड़ता है। इस बात से प्रभावित होकर उन्होंने ब्रह्मचारीजी को सदा के लिये श्री प्रभुजी के चरणों में रहने की अनुमति दे दी। यह सब अहिंसा वृत्ति का परिणाम था। इसलिए देखो! अपने आप को योगी बनाने की चेष्टा करो। जब तक अन्तर्मुखी वृत्ति नहीं बनती तब तक **'अन्धेन नीयमाना : यथा अन्धा :'** वाली बात रहती है। बस! इस समय अपनी वाणी को यही विराम देता हूँ। सभी को बार–बार आशीर्वाद।

●●●

सिद्धयोग - हमारी प्यारी पत्रिका

– योगाचार्य डॉ. दासलाल ब्रह्मचारी

प्रिय पाठकगण / गुरु भाई–बहिन,

जय गुरुदेव की!

क्षण–क्षण स्मरणीय गुरुदेव योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के संकल्प से प्रकट कल्पवृक्ष के रूप में हमारी पत्रिका 'सिद्धयोग' अपनी आयु के 48 वर्ष पूरा करके अप्रैल विशेषांक के साथ ही 49वें वर्ष में प्रवेश पा रही है। श्री गुरुदेव भगवान ने इस पावन वृक्ष का आरोपण सन् 1968 में किया था, जिसका एकमात्र लक्ष्य था कि योग जिज्ञासु इसके माध्यम से योग तत्व व सिद्धान्त को समझ लें जिससे योग मार्ग पर चलकर आध्यात्मिक उन्नति के चरम लक्ष्य की ओर वे चल सकें। आज के इस विकासशील युग में भौतिक उन्नति के साथ–साथ धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में भी जागरूकता आ गयी है। इसी क्रम में धार्मिक व आध्यात्मिक पत्र–पत्रिकाओं का भी समाज में व्यापक प्रचार कार्य चल रहा है। किन्तु 'सिद्धयोग' जिस प्रकार से योग के सैद्धांतिक दुरुह व दुर्बोध्य पक्ष को अत्यन्त सरल भाषा में बोधगम्य बना देती है ऐसा दूसरी पत्रिकाओं में देखने को नहीं मिलता।

'सिद्धयोग' गुरुदेव से सम्पर्क बनाये रखने का सक्षम माध्यम रही है। साधक घर बैठे ही गुरुदेव के उपदेश एवं आज्ञाओं का संकेत पा जाया करते हैं। पत्रिका के माध्यम से भी गुरुदेव की आत्मिक शक्ति का संचार शिष्यों में होता रहता है। साधकों के मन में उठने वाले संशयों का निवारण भी इससे हो जाता है।

वेदान्त प्रक्रिया में आत्म दर्शन की ओर चलने के साधन के रूप में तीन अंगों का वर्णन किया गया है। वेदान्त का सिद्धान्त है – ***आत्मा वा अरेद्रष्टव्यः, श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः।*** अर्थात् आत्मा का दर्शन करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम श्री गुरुदेव के मुख से आत्म तत्व के विषय में श्रवण करना चाहिए। श्रवण करने के पश्चात् मनन करना चाहिए। ठीक प्रकार से मनन हो जाने पर निदिध्यासन में बैठना चाहिए। निदिध्यासन ही योग की भाषा में ध्यान–योग का अभ्यास कहलाता है। श्री गुरुदेव जब शिष्य को उपदेश करते हैं तो शब्द के माध्यम से शिष्य पर शक्ति संचार होता है। योग के ग्रन्थों में शक्तिपात की अनेक प्रकार की दीक्षाओं का वर्णन मिलता है। इनमें संकल्प दीक्षा, स्पर्श दीक्षा, दृग दीक्षा, हार्द दीक्षा आदि दीक्षाओं का वर्णन है। गुरुदेव दीक्षा दान के समय गुरुमन्त्र के माध्यम से शिष्य के दाहिने कर्ण में शक्ति का संचार करते हैं। आनन्दकन्द श्री गुरुदेव भगवान् ने 'सिद्धयोग' परम्परा को अक्षुण्ण रखा है। सिद्धयोग के पठन से कोई भी योग जिज्ञासु योग की परिभाषा, स्वरूप, विधि एवं लक्ष्य समझ सकता है। श्रद्धालु साधकों में सिद्धयोग के माध्यम से ही गुरुदेव के दर्शन एवं कृपालाभ होते देखा गया है। जीवन से परेशान कई व्यक्तियों को सन्मार्ग मिला और जीवन की धारा ही बदल गयी। पत्रिका के

पठन–पाठन एवं अनुशीलन से उत्साह, उल्लास एवं मार्गदर्शन मिलता है। योग शास्त्र अत्यन्त गहन है, इसके दुरूह विषयों को समझना बहुत कठिन है; किन्तु सिद्धयोग ने इसे अत्यन्त सरल एवं सुबोध्य बनाया है। पत्रिका का अध्ययन साधक के अन्दर श्रद्धा का बीज बो देता है। जिसे योग साधना की नींव माना गया है। जिसमें सम्यक् श्रद्धा नहीं है, वह विनष्ट हो जाता है। भगवान के गीता में वचन है– **'संशयात्मा विनश्यति'** अर्थात् संशय युक्त व्यक्ति पथभ्रष्ट होकर पतन की ओर चला जाता है। इसलिए 'सिद्धयोग' श्रद्धा एवं स्वाध्याय का अचूक साधन है। साधक को स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुदेव अपने शिष्यों को उपदेश करते हुए कहते हैं कि – **'स्वाध्यायाद् मा प्रमदितव्यम्'** अर्थात् स्वाध्याय में कदापि प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुमन्त्र का जाप भी उत्तम श्रेणी का स्वाध्याय है, इसमें प्रमाद या लापरवाही नहीं करनी चाहिए। अस्तु।

पत्रिका के लिए, गुरुदेव के समय से ही, किसी प्रकार की विज्ञापन आदि सामग्री प्रकाशनार्थ स्वीकार कर वित्तीय आय जुटाने अथवा सहायता प्राप्त करने का उद्देश्य नहीं रहा है, वह आज भी यथावत् है। 25–30 हजार रुपये का वार्षिक घाटा सहन करके भी पत्रिका अबाध गति से प्रकाशित हो रही है, यह सब पूज्य गुरुदेवजी की कृपा का ही फल है। उदारमना गुरुभाई–बहिनों के आर्थिक सहयोग से घाटे की पूर्ति हो जाती है।

अन्त में, मैं उन सभी मनीषी विद्वान लेखकों एवं रचनाकार कवियों के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनके उत्कृष्ट योगपरक लेख एवं सारगर्भित रचनाओं से पत्रिका की महत्ता व शोभा बनी हुई है। मैं उनसे इसी प्रकार अपनी रचनायें, लेखादि निरन्तर भेजते रहकर स्नेह भाव बनाये रखने का नम्र अनुरोध करता हूँ। पत्रिका के पाठकों व ग्राहकों से भी निवेदन करूँगा कि वे नियमित ग्राहक बने रहें तथा कम से कम 5 नये सदस्य अवश्य जोड़ें। इस दिशा में गंगापुर मंडल, कानपुर मंडल व सहारनपुर मंडल के साधकों का प्रयास वस्तुतः स्तुत्य है। इस अंक के साथ ही वार्षिक ग्राहकों का शुल्क समाप्त हो रहा है, अतः समय पर आगामी वर्ष के लिए शुल्क भेज दें। वार्षिक शुल्क रु. 180/– हो गया है तथा आजीवन शुल्क रु. 1000/– हो गया है।

आप सभी के लिए आने वाला वर्ष मंगलमय हो।

आनन्दकन्द श्री प्रभु जी का परम पावन प्राकट्य दिवस श्री रामनवमी योग महोत्सव के रूप में सवाँई आश्रम, आगरा में बड़े हर्षोल्लास व धूमधाम से मनाया जायेगा, सभी श्रद्धालु भक्त उसमें सम्मिलित होकर श्री प्रभु जी की कृपा कोर को पाकर जीवन को धन्य बना लें। इस अवसर पर श्री प्रभु जी के चरणों में सभी भक्तों का कोटि–कोटि नमन है।

श्री रामनवमी योग महोत्सव दिनांक 13, 14 व 15 अप्रैल, 2016 को मनाया जाना निश्चित हो चुका है।

सभी गुरु भक्तों को चाहिये कि श्री रामनवमी को पवित्र उत्सव पर धाम पर पहुँचें तथा गुरुदेव की कृपा को प्राप्त करें। जो यह मानते हैं कि गुरुदेव तो हैं नहीं वहाँ जाकर क्या करेंगे यह उनकी महान भूल है। गुरुदेव की शक्ति तो अनवरत बरसती रहती है। गुरुदेव कहा करते थे कि श्री

सिद्धगुफा से ही सारी दुनियाँ को योग का प्रकाश मिल रहा है। अतः सभी आश्रम की शाखाओं के संचालकों को चाहिये स्वयं भी आवें और अन्य गुरु भक्तों को पवित्र धाम के दर्शन करावें ताकि योग ध्यान में उत्तरोत्तर उन्नति पा सकें। जीवन में यदि आत्म दर्शन पा लिया तो अत्युत्तम बात है अन्यथा 'महती विनष्टि' महान संताप की बात है – बहुत बड़ी हानि की बात है अतः आत्मदर्शन का लक्ष्य सामने रखते हुये 'कार्यम् वा साधेयम् देहं वा पातेयम् ' अर्थात् या तो आत्मसिद्धि रूप महान कार्य को सिद्ध करूँ या मेरा देह पात हो जाए तब भी कोई चिन्ता न मानते हुये सतत् आत्म लाभ की ओर अग्रसर रहना चाहिये। भौतिक भोग वाद प्रपञ्च है अपने साथ धोखा है। अतः सत्य की प्राप्ति के लिए प्राणपण से लग जायें।

जय गुरुदेव जी की ।

आपका

डॉ. दासलाल योगाचार्य

संपादक सिद्धयोग

●●●

"तुम घबराकर जब उस जाल से निकलना चाहते हो, माया को छोड़ना चाहते हो, तब अनायास ही तुम्हें मायापति भगवान् का स्मरण होता है। तुम उन्हें पुकारते हो, व्याकुल होकर उनकी टेर लगाते हो तो वे तत्काल आकर जाल काट डालते हैं और तब तुम माया को छोड़-उनकी माया उन्हें सौंपकर, परम शुद्ध आनन्दमय हो जाते हो; पर इसका साधना शुरू करनी होती है स्वार्थ-त्याग से।"

यथा अन्नं तथा मनः

– श्री दिनेश चन्द शर्मा, आगरा

धर्म शास्त्रों में भोजन के नियमों की विस्तार से विवेचना की गई है। शास्त्रीय नियम है– **" यथा अन्नं तथा मनः "**। मनुष्य जिस प्रकार का अन्न सेवन करता है। उसी प्रकार का उनका मन बन जाया करता है। गीता के सत्रहवे अध्याय में तीन प्रकार के आंहारों का वर्णन है और ये आहार सत्वप्रधान, रजोगुण प्रधान और तमोगुण प्रधान प्राणियों को अपनी–अपनी प्रकृति के अनुसार प्रिय होते हैं। अपने स्वभाव के अनुरूप व्यक्ति को खान – पान व रहन–सहन प्रिय होता है। योग साधकों के लिए सात्विक भोजन पर बल दिया गया है।

आयुः सत्व बलारोग्य सुख प्रीति विवर्धनाः

रस्याः स्निग्धा ःस्थिरा ह्रद्‌या आहाराः सात्विक प्रियाः।। (गीता 17/8)

आयु, सत्व बल और आरोग्य को बढ़ाने वाले, सुख और प्रीति की वृद्धि करने वाले, शरीर में स्थाई शक्ति बनाये रखने वाले तथा ह्रदय को पुष्ट करने वाले, स्वभाव से ही रूचिकर, रसीले और चिकने पदार्थ सात्विक आहार कहलाते हैं। इनमें गोघृत, मक्खन, दूध आदि पेय पदार्थ, गेहूँ, चना, जौ, आदि अन्न, सेव, सन्तरा, केला आदि फल तथा साग सब्जियाँ व पवित्र, कन्द आदि हैं। इनके सेवन से मन में सतोगुण का विकास होता है और बुद्धि पवित्र रहती है।

कड़वे, खट्‌टे, अधिक नमक वाले, अत्यन्त गर्म, रूखे पदार्थ, मिर्च–मसाले वाले आहार रजोगुण को बढ़ाते हैं। बासी, उच्छिष्ट, जूठा, दुर्गन्ध युक्त, रसरहित भोजन तमोगुण को बढ़ाने वाला होता है। मनुष्य को सदा अपनी नेक कमाई का सात्विक भोजन करना चाहिए।

शरीर को स्वस्थ और पवित्र रखने से " योग " की शुरूआत होती है। आसनों की सिद्धि से शरीर निरोग रहता है। सात्विक भोजन से जीवन में सन्तोष और प्रसन्नता आती है। भोजन केवल स्वाद के लिए नहीं अपितु आरोग्य वृद्धि के लिए होना चाहिए। गोस्वामी तुलसीदास जी श्री राम चरित मानस में कहते हैं –

भोजन करिअ तृपिति हित लागी,
जिमि सो असनं पचवै जठरागी।।

मन की निर्मलता और बुद्धि की शुद्धता का साधन शरीर से प्रारम्भ होता है। शरीर की सहायता से योग, तप, जप आदि किया जाता है। धर्म साधन के लिए स्वस्थ शरीर की आवश्यकता है – **" शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम् "** । आरोग्य रहने के लिए धर्मग्रन्थों में

आहार और विहार पर विशेष विचार किया गया है।

धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूल मुक्तमम्। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के लिए शरीर को निरोग रखना चाहिए। निरोग शरीर से ही सभी पुरूषार्थ प्राप्त किये जा सकते हैं। शास्त्रो में भोजन को भी एक नित्य यज्ञ कहा गया है। इस नित्य यज्ञ के यज्ञेश्वर भगवान वैश्वानर कहे गये हैं। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है –

अहम् वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रित:।
प्राणायान समा युक्त: पचाम्यन्नं चतुर्विधम ।। गीता 15/14

श्री भगवान वैश्वानर (जठराग्नि) रूप में प्राणी में बैठकर प्राण और अपान वायु की सहकारिता से चार प्रकार के (चर्व्य, लेह, चोष्य, पेय) भोज्य अन्नों का भक्षण करते हैं।

भोजन से केवल उदर पूर्ति ही नहीं अपितु भगवान की पूजा भी होती है। इसीलिए शास्त्रों में भोजन की पवित्रता पर विशेष बल दिया गया है। भगवान – गुरुदेव को भोग लगाकर प्रसाद रूप में प्रसाद समझकर भोजन करना चाहिए। खाद्य वस्तुएँ पवित्र और सात्विक हों और भगवान को अर्पण करके ही ग्रहण करनी चाहिए। छान्दोग्य उपनिषद में वर्णन है –

आहार शुद्धौ सत्व शुद्धि: सत्व शुद्धौ ध्रुवा स्मृति:
स्मृति लम्भे सर्व ग्रन्थीनाम् विप्रमोक्ष:।।

आहार शुद्धि से सत्व शुद्धि, सत्व शुद्धि से ध्रुवा स्मृति और स्मृति शुद्धि से सभी ग्रन्थियों का मोचन होता है। भोजन की शुद्धि से ही चित्त की शुद्धि होती है और चित्त की शुद्धि से प्रज्ञा की प्राप्ति होती है। प्रज्ञा से ही सारे बन्धनों का क्षय होता है। आहार शुद्ध होने पर सतोगुण की शुद्धि और सतोगुण के शुद्ध होने पर निश्चित ही मनुष्य को समाधि की प्राप्ति होती है।

स्वस्थ व सुखद आयु के लिए सात्विक और सन्तुलित भोजन एवं संयमित जीवन अपेक्षित है। अति भोजन और अधिक अनशन जीवन के लिए घातक माना गया है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है –

नात्य श्नतस्तु योगोस्ति न चैकान्त मनश्नत:।
न चाति स्वप्न शीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ।। गीता 6/16

योग अथवा भजन की सिद्धी न तो अधिक खाने वाले को, और न ही कम खाने वाले अर्थात उपवास करने वाले की, न अधिक जागने या अधिक सोने वाले को प्राप्त होती है। क्योंकि इससे युक्तता की कमी हो जाती है। योग शास्त्र में इनको उचित मात्रा में करने वाल को 'युक्त' कहा गया है।

दु:खों का नाश करने वाला 'योग' तो यथा योग्य आहार–विहार करने वाले का, कर्मो के लिए यथा योग्य चेष्टा करने वाले तथा यथा योग्य सोने और जागने वाले का ही सिद्ध होता है। भोजन युक्त मात्रा में हो अर्थात् न तो आवश्यकता से अधिक हो और न कम, संयमपूर्वक एवं नियमानुकूल हो। भोजन असंयम से शरीर में रोग प्रवेश होता है, जो योग–भजन में बाधा उपस्थित करता है –

युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टसाकर्मसु
युक्त स्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा। गीता 6/17

पूज्य गुरुदेव योग–योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के व्याख्यानों – प्रवचनों में भोजन की पवित्रता व सात्विकता पर विस्तृत चर्चा होती थी। यथा सम्भव साधक को भोजन एकान्त में मौन रहकर करना चाहिए। अपना जूठा (उच्छिष्ट) भोजन किसी को नहीं खिलाना चाहिए और न किसी का जूठा भोजन स्वयं खाना चाहिए। मन की निर्मलता और बुद्धि की शुद्धता का साधन शरीर से प्रारम्भ होता है। अत: सात्विक और पवित्र आहार पर बल दिया गया है।

निषिद्ध भोजन भी कई प्रकार का बताया गया है जैसे – स्वभाव दुष्ट (लहसुन, प्याज आदि), क्रिया दुष्ट (निकृष्ट–दुष्ट प्राणी द्वारा बनाया / परोसा हुआ), कालदुष्ट (समय बीत जाने पर या अनुचित या अनुपयुक्त समय का भोजन (बासी ग्रहण या पका हुआ में रसदुष्ट (बहुत कडुवा, स्वाद बिगड़ गया) और संसर्ग दुष्ट भोजन पर ध्यान देने की भी बात कही गयी है।

अत: सात्विक, हितकारी,और नियन्त्रित आहार पर ध्यान देना चाहिए। हित भुक् अर्थात् हितकर, पुष्टिकर व अनुकूल आहार मितभुक् – परिमित आहार और ऋतु भुक अर्थात ऋतु व काल के अनुरूप आहार पर ग्रन्थों में उल्लेख है। आचार्य चरक ने भी चरक सूत्र 27/348 में कहा है कि हितकारी, आहार–विहार करने वाले जितेन्द्रिय पुरुष सज्जनों से प्रशंसा प्राप्त करते हुए रोग रहित होकर सौ वर्ष जीवित रहे।

शास्त्रों में मिताहार की भी बड़ी महिमा कही गयी है।–

सुस्निग्ध मधुराहारश्च तुर्यांश विवर्जित:
भुंक्ते शिव शुभम् प्रीत्यै मिताहार स उच्यते।

बहुत रूखा–सूखा भी नहीं खाना चाहिए। स्निग्ध और मधुर भी हो और वह भी उतना ही खाना चाहिए जिससे पेट का चौथा अंश खाली रहे। इस प्रकार भोजन करने वाले का सदा शुभ होता है और वह शरीर से सुखी रहता है। इसे मिताहार कहा जाता है, जो यौगिक क्रियाओं में आवश्यक माना गया है।

भोजन जैसे बाह्य शरीर का पोषक है वैसे ही भजन आन्तरिक शरीर का। मनुष्य को अपने शरीर के सर्वांगीण विकास के लिए दोनों की आवश्यकता पर ध्यान देना चाहिए। जैसे भोजन के बिना भजन। योग ठीक से नहीं हो सकता वैसे ही साधक को निश्चय करना चाहिए कि बिना भजन–स्वाध्याय किए भोजन ग्रहण नहीं करूँगा। भोजन से शरीर की स्थिति बनी रहती है तो भजन, योग ईश्वर से सम्पर्क बढ़ाता है। जो भी खाओ या करो उसे भगवान के अर्पण कर दो।

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ।। गीता 9/27

शास्त्रों में बताये गये नियमों पर विचार करते हुए पवित्र और सात्विक आहार लेना उचित है।

● ● ●

आवश्यक सूचना

नये वर्ष का शुल्क अविलम्ब जमा करें।

सिद्धयोग पाठकों को विदित है ही कि पत्रिका के मार्च अंक के साथ ही वार्षिक शुल्क समाप्त हो जाता है और अप्रैल अंक से पत्रिका का नया वर्ष प्रारम्भ होता है।

अतः ग्राहकों से निवेदन है कि वर्ष 2016 का वार्षिक शुल्क 180 रुपये 'सिद्धयोग' कार्यालय में अविलम्ब जमा करा दें ताकि समय से आपको पत्रिका भेजी जा सके।

— आचार्य दासलाल
व्यवस्थापक/सम्पादक 'सिद्धयोग'

कालीय-दमन लीला

— अनन्तश्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती जी महाराज

एक पर्वत का नाम है कलिन्द। कलिन्द माने जो कलियुग के दोषों को मिटावे। कलह न होने दे। पर्वतमें दृढ़ता तो स्वाभाविक ही होती है। समत्व और दृढ़ता पर ज्ञान–सूर्य का प्रकाश हुआ। ज्ञान, समता एवं दृढ़ता के संयोग से भगवती कालिन्दी प्रकट हुई। कालिन्दी भगवान् की नित्य प्रेयसी हैं। व्रज–लीला एवं द्वारिका – लीला दोनों में उनकी समान स्थिति है। व्रज–लीला में श्रीकृष्ण के ध्यान में मग्न होकर श्यामवर्ण हो गयीं, मन्द–मन्थर गतिसे नृत्य करती रहती हैं तथा वृन्दावन–विहारी भगवान् श्रीकृष्ण की लीला में सहयोगिनी हैं। प्रयाग में गङ्गा से एक होकर समुद्र में प्रवेश करती हैं, एकाकी नहीं। वही पातिव्रत्य के अनुकूल है, और द्वारिका में पहुँच जाती हैं। वहाँ श्रीकृष्ण की चतुर्थ पटरानी हैं। जैसे प्राचीन आचार्यों ने गङ्गा को ब्रह्मद्रव कहा है वैसे ही रसिकाचार्यों ने श्रीमती कालिन्दी को गोलोकके नित्य विहार में तन्मय श्री राधाकृष्ण युगलकिशोर का विलास–स्वेद माना है। श्रीमद् भागवत में कहा गया है कि कालिन्दी – पुलिन के दर्शन से श्री कृष्ण के हृदय में उत्तम प्रीति का उदय हुआ। निश्चय ही श्री कालिन्दी में उत्तम–प्रेम की उद्दीपन–सामग्री वर्तमान है ; अन्यथा प्रेम–स्वरूप श्रीकृष्ण के प्रेममय हृदय को भी उद्दीप्त करने का सामर्थ्य कहाँ से आता ? जब हम इस दृष्टिकोण से देखते हैं तब स्पष्ट हो जाता है कि भगवान् श्रीकृष्ण कालिन्दी–तटपर जाते समय अपने ज्येष्ठ भ्राता बलराम जी को साथ क्यों नहीं ले गये ?

ययौ राममृते राजन्

(श्रीमद्भा. 10–15–47)

महाराष्ट्र के नासिक – निवासी भक्त कवि श्रीहरिसूरि ने लिखा है कि जब वे एक दिन भजन में बैठे हुए थे भगवान् उनके सामने प्रकट हुए और बोले – पण्डित जी ! आप मेरी लीलापर कुछ लिखिये । श्रीहरिसूरि ने विनम्र होकर निवेदन किया – ' आपकी लीला का रहस्य सहस्त्र मुख शेष भी वर्णन नहीं कर सकते, मैं भला क्या करूँगा ? ' भगवान् बोले – ' तुम लिखो तो सही, अपने हृदय में जो – जो भाव रखकर मैंने लीलाएँ की हैं वे स्वयं तुम्हारी बुद्धि में प्रकट हो जायेंगी। ' भगवान की यही आज्ञा शिरोधार्य करके श्रीहरिसूरि ने भगवान की लीला पर सहस्त्राधिक उत्प्रेक्षाएँ लिखी हैं। पाँच सहस्त्र श्लोकों का भक्ति –रसायन ग्रन्थ संस्कृत भाषा में उपलब्ध है। बलराम जी को साथ न ले जाने पर उनकी सूक्ति देखिये –

राममृते इति

(श्रीमद्भा. 10.15.47)

अस्मिन्नह्न्येष नीतो यदि सह विपिनं गोपवद्वारिपश्चेद्-

योगो भ्रश्यत्प्रयोगो मम भुवि भविता यस्तदुज्जीवनार्थः ।

जीर्णं तद्वा न पीतं यदि तदपि तदन्वेषणे बद्धकक्षो

भूयात्कुर्याच्च सद्योऽमृतमयमुदकं यामुनं शिक्षिताहिः ।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.63)

गोगोपजीवनमथाऽहिनिरासपूर्वं यद्यामुनाम्बुविमलीकरणं च कार्यम् ।

सङ्कल्पितं भुविमयात दिदं न सिद्ध्येदित्यच्युतो वनमगात्स विनैव रामम् ।।

(15.64)

'श्री कृष्ण ने विचार किया, मैंने संकल्प किया है कि गाय एवं गोपों को स्व–वृष्टि से अमृत–वृष्टि करके मैं जीवित करूँगा। कालिय नाग को यहाँ से भगा दूँगा। जमुना–जल को निर्मल कर दूँगा। यदि मैं बलराम जी को अपने साथ लेकर जाऊँगा तो मैं इनमें–से कोई लीला न कर सकूँगा। मेरा विष–नाशक–योग भ्रष्ट प्रयोग हो जायेगा। बलराम जी के साथ रहने पर वे विषैला जल पीयेंगे ही नहीं, या पीयेंगे तो उन्हें पच जायेगा। बलराम जी कालिय नाग को ढूँढ निकालेंगे, उसको दण्ड दे देंगे और यमुना–जल को अमृतमय बना लेंगे। अतः आज उनको गोचारण में साथ न ले जाना ही उचित है।'

श्रीकृष्ण ने मन में सोचा मेरे भाई बलराम जी भुजङ्गेश हैं। (संस्कृत भाषा में 'भुजंग' माने सर्प होता है और जार भी होता है। बलराम जी उनके स्वामी हैं।) अहंकार और प्रकृति दोनों से ऐसा ही है। इस भुजङ्गाधम कालिय नाग को सबक सिखाने के लिए मैं अकेला ही पर्याप्त हूँ, भाई साहब की कोई आवश्यकता नहीं है। अतएव अकेले गये।

अहंकृत्या प्रकृत्याऽयं भुजङ्गेशो मदग्रजः।

भुजङ्गाधमशिक्षायामहमे को - ऽलमित्यगात् ।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.65)

श्रीहरिसूरि जी कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण अपने बड़े भाई के सामने अपनी प्रेयसी कालिन्दी के हार्द–रस अथवा जल में प्रवेश करके अन्तरङ्ग–केलि कैसे करते ? अतएव वे भुजंग–भोगको विमल करने के लिए बिना राम के ही कालिन्दी तट पर गये।

स्वप्रेयसीहार्दरसान्तरङ्गकेलिं न कुर्याद् गुरुसन्निधाने ।

भुजङ्गभोगं विमलञ्चिकीर्षुर्ययौ विना राममितीव कृष्णः ।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.66)

श्रीकृष्ण ने अपने मन में यह विचार किया बलराम जी शेषावतार हैं। यदि उनके मन में निजजन कालिय–नाग की रक्षा की इच्छा उदय हो गयी तो इस अशेष जल दूषक दुष्ट सर्प को

किसी प्रकार दण्ड नही दिया जा सकेगा। यह सोचकर ही मानो श्रीकृष्ण कालिय–मर्दन के दिन बलराम जी को छोड़कर अत्यन्त रूचि के साथ वन में चले गये। क्यों न हो, वे सबके प्यारे, सुहृत् और गोकुलानन्द दायी जो हैं।

रामः शेषावतारो यदि स निजजन-त्राणजाताभिलाष

स्तत्र स्यादस्य दण्डः कथमपि दुरहेर्दूषिताशेषवारः।

इत्यालोच्येव मन्ये प्रभुरखलसुहृद् गोकुलानन्ददायी

हित्वा रामं जगामाधिकरुचिविपिनं कालियोन्मर्दनेऽह्नि।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.67)

श्रीकृष्ण के बुद्धि में एक राजनीतिक विचार उदय हुआ। यदि अपना शत्रु अपने मित्र का मित्र हो तो अपने मित्र के सामने उसका दमन नहीं करना चाहिए। कालियनाग है और बलराम नागेश है। उनके सामने कालियनाग का दमन नहीं करना चाहिए – प्रभो ! ऐसा जान पड़ता है कि यही सोचकर उस दिन आप अकेले–अकेले गोचारण के लिए गये थे –

स्वशत्रुर्यदि स्वीयमित्रानुयोगी

तदा तत्समक्षं न शिक्षा विधेया।

प्रभो लोकनीतिं विभाव्यैव यातो

भवानेक एवाऽह्नि तत्रेति युक्तम्।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.68)

गोचारण के लिए वनगमन के समय ग्वालबालों में श्रीकृष्णा ने घोषणा की, आज अशेष गोपबालक गोधन–पावन के लिए वन में चलेंगे। बलराम ने यह घोषणा सुनी तो विचार किया कि मैं अशेष नहीं शेष हूँ। अतएव आज मुझे वन में नहीं जाना चाहिए।

अद्याशेषा वयमिह यास्यामो गोधनानि पालयितुम्।

इत्यच्युतस्य वचनं श्रृण्वन् प्रायोऽवसद् गृहे रामः।।

(श्रीभक्ति रसायनम् 15.69)

श्रीमद्भागवत में कहा गया कि प्यास के कारण गायें एवं गोपोंने यमुना का कालिय विष–दूषित जल पी लिया। इस पर श्रीहरि सूरि कहते हैं कि अज्ञता की सीमा गोप और गाय हैं। विज्ञता की सीमा स्वयं भगवान् हैं। विष–दुष्ट जल का पान करके गोपों ने अज्ञता की सीमा प्रकट कर दी और श्रीकृष्ण ने उसे न पीकर विज्ञता की सीमा प्रकट कर दी क्योंकि प्यास तो दोनों को समान ही लगी थी।

जलं पपुरिति

(श्रीमद्भा. 10.15.48)

आगोप-माबुध-मिहाज्ञ- सुविज्ञ-सीमे

ख्याते तयोर्विशदभाव-मनायि पूर्वा।

गोपैः प्रपीतविषदुष्टजलैः परा तु

श्रीशेन यत्कृदुदयो निखिलेषु तुल्यः ।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.70)

श्रीकृष्ण ने देखा गाय और ग्वालबाल यह विष-दूषित जल पीकर मर चुके हैं। उन्होंने दया से द्रवित होकर अमृतवर्षिणी दृष्टि से देखकर उन्हें जीवित कर दिया। श्रीकृष्ण ने अपने मन में यह विचार किया कि यही संसार की दशा है। लोग जानते हैं कि यह संसार-नदी विषमय जल से भरपूर है और इसमें कालरूपी कालियनाग प्रतिक्षण लोगों को निगलता रहता है। मनुष्य यह भी देखता है कि उस विष जल में डुबकी लगाने से मृत्यु हो जाती है, फिर भी लोग मोह-वश उससे आसक्ति करते हैं और उसका भोग करते हैं। निश्चय ही ऐसे लोग भी जब मेरे चरणों की शरण में आ जाते हैं तब मैं उन्हें जीवन-दान देता हूँ। भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी इस लीला के द्वारा यही दो रहस्य प्रकट किये। अतएव उन्होंने विष-जलपान से उन्हें रोका नहीं और तत्क्षण अपनी दया-दृष्टि से उन्हें जीवनदान भी दे दिया।

समजीवयदिति

(श्रीमद्भा. 10.15.50)

जानन्तोऽपि भवापगां विषजलां जाग्रत्कृतान्तोरगां

पश्यतोऽपि तदङ्गसङ्गविगतप्राणानपि प्राणिनः।

तत्संसक्त धियो भवन्ति च पुनर्मोहात्तथा तद्भुज-

स्तादृक्षा अपि ये मदङ्घ्रिशरणास्तान् जीवयाम्यन्वहम्।।

एतद्द्वयं जगति सूचयताऽच्युतेन

गो गोपजातकृत तद्विषवारि पानम्।

नैव न्यषेध्यथ च तत्क्षण एव तेषा-

मुज्जीवनं सदयया विहितं स्वदृष्ट्या। (श्रीभक्तिरसायनम् 71-72)

उचित यह था कि गोप और गायों को विषैला जल पीने से भगवान् रोक देते। अपना आत्मीय जन कोई गलत काम करने जा रहा हो तो उसे रोक देने में ही औचित्य है। परन्तु भगवान् ने उन्हें रोका क्यों नहीं ? इस पर श्रीहरि सूरि कहते हैं कि यह कर्तव्य उसी मनुष्य का है जो उस कर्म के फल को रोक सकने में समर्थ न हो। भगवान् श्रीकृष्ण अचिन्त्य चरित और अकुण्ठ शक्ति हैं। यही कारण है कि इनका अनिष्ट नहीं होने देंगे यह निश्चय करके भगवान् चुप–चाप देखते रहे।

स एव मनुजो निजान् भृशमनिष्टदात्कर्मणो

निवारयति यस्तदुत्थिन–फलोपशान्त्यक्षमः।

अचिन्त्यचरितस्त्वयं प्रभुरकुण्ठशक्तिस्तदा

यदा स परमोचितं तदपि वीक्ष्य तूष्णीं स्थितः।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.73)

चतुर्भुज रूप में प्रकट होने पर मथुरा में देवकी माता ने स्तुति की थी कि तुम्हारे भक्त को देखकर मृत्यु भाग जाती है। जान पड़ता है कि अपनी माता का वचन सत्य प्रमाणित करने के लिए प्रभु ने गाय एवं गोपालों को जीवित कर दिया। सच–मुच श्रीकृष्ण भक्त–कल्याणकारी हैं।

यस्त्वद्भक्तो मृत्युरस्मादपैतीत्येतत्सत्यं मातृवाक्यं विधास्यन्।

गो–गोपालोज्जीवनं तत्प्रमाणं स्पष्टं चक्रे भक्तकल्याणकर्ता।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.74)

श्रीकृष्ण ने अपनी लीला से यह स्पष्ट कर दिया कि यदि तृष्णाकुल (प्यासे या लोभी) और गायों अथवा इन्द्रियों के पोषण में समासक्त प्राणी भी मेरे चरणों के शरणागत हों तो उन्हें अवश्य निरन्तर रक्षा का विषय बनाता रहता हूँ, जीवनदान करता हूँ, इसमें कोई सन्देह नहीं।

बहुतृषोऽपि गवावनतत्परा अपि मदङ्घ्रिरता यदितानहम्।

अविरतं वनतो वत जीवयाम्यकृत तत्कृतितः स्फुटमच्युतः।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.75)

गोविन्द–दृष्टि की अमृत–वृष्टि से जो परिप्लुत हैं, मैं विष विष–रूप नहीं रहता, उससे विपरीत रूप वाला अमृत हो जाता हूँ। मेरे नाम विषमें से 'ष' का लोप हो जाता है मैं विशेष हो जाता हूँ। मानों विष स्वयं अपने नाम की व्याख्या करके तत्क्षण नष्टवीर्य हो गया; यद्यपि वह अत्यन्त प्रबल था।

गोविन्ददृष्टय–मृतवृष्टि–परिप्लुताना–

मग्रेऽहमस्मि भुवनेषु विरूपमेव।

कुर्वन् स्वनामविशदं विषमेवमासीद्

गोपेष्वसह्यमपि तत्क्षणनष्टवीर्यम्।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.76)

यदि मनुष्य के ऊपर गोविन्द की पूर्ण करुणा हो तो मनुष्य के लिए दुर्विषयरूप विष से भी भय नहीं रहता। इसमें यह प्रमाण है कि गाय और गोप पहले से भी अधिक तेजस्वी हो गये।

गोविन्दपूर्णकरुणा यदि तत्र कस्मा-

दप्यत्र दुर्विषयतोऽपि विषाद्भयं स्यात्।

स्पष्टं तु मानमिदमेव यदत्र गोपा-

स्तेजस्विनः समभवन् भुवि पूर्वतोऽपि।।

(श्रीभक्तिरसायनम् 15.77)

गायें एवं गोपों की क्षणभर भी उपेक्षा न करके जो प्रभु ने उनके संजीवन की लीला की, वह स्नेहवात्सल्य की भी अभिव्यक्ति है। इसी प्रसंग से भगवान् की दृष्टि युमना जी के उस विषैले ह्रद पर पड़ी जिसमें कालिय नाग रहता था। जिसके कारण यमुना जी का अमृतमय जल विषमय हो रहा था। कृष्ण ने देखा- यमुना मेरी पत्नी 'कृष्णा' है। इसमें कृष्ण-सर्प ने निवास कर रखा है। अब उसको यहाँ से निकाल देना मेरा कर्तव्य है। पत्नी का दुःख दूर करना पति का ही परम कर्तव्य होता है।

● ● ●

योग-आसन

उत्तान कूर्मासन

कुक्कुटासन बन्धस्थं कराभ्यां घृत कन्धरं।
पीठं कूर्मवदुत्थानं एमदुत्तान कूर्मकम।।

विधि – पद्मासन लगाकर व अपने दोनों हाथों को कुक्कुटासन की ही तरह उरुभाग में रखें हुए पैरों के पंजे व पिंडलियों के बीच में हाथ निकालकर व ऊपर की ओर ले जाकर अपने कन्धों पर हाथ जमा दें या सम्भव हो सके तो अपने दायें व बायें हाथ के पंजों को परस्पर गर्दन के पीछे से मिलाकर पकड़े रहें। इस आसन को उत्तान कूर्मासन कहते हैं। आजकल योगासनों की श्रेणियों में इसको गर्भासन भी कहा जाता है क्योंकि इस आसन को करने वाले के शरीर की आकृति गर्भस्थ बालक जैसी बन जाती है।

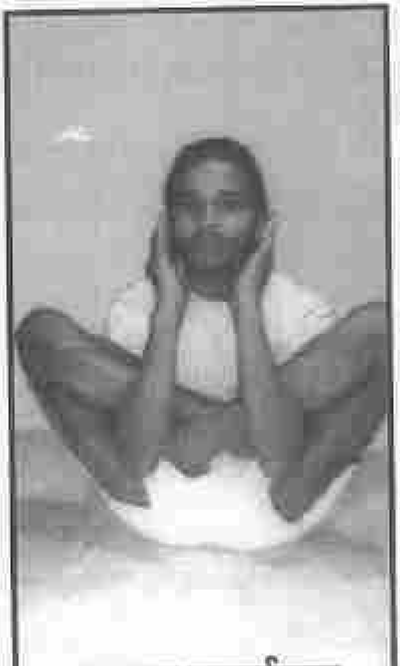

उत्तान कूर्मासन

यदि प्लावनी कुम्भक लगाकर करें तो अत्यन्त ही सहज हो जायेगा।

दूसरा प्रकार–

इसी प्रकार मुक्त पद्मासन (साधारण पद्मासन जिसमें हाथों को पीछे की ओर से घुमाकर जंघा स्थल में जमाये हुए पैरों के अंगूठे पकड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती) लगाकर सीधे लेट जायें व अपने दोनों पैरों के अंगूठों को दृढ़ता से पकड़ लें (दाहिने हाथ से बायें पैर के अंगूठे को, बायें हाथ से दाहिने पैर के अंगूठे को) कोहनियों को जमीन में लगाये रखें, शिर भाग को थोड़ा उल्टा कर पीछे की ओर थोड़ा मोड़कर मस्तक जमीन में लगा दें। अपने पेट व छाती के भाग को ऊपर की ओर उठाये रखें। पैरों के अंगूठे सहज तनाव से ऊपर की ओर खींचे रहें। यह भी मत्स्यासन प्रसारित है।

लाभ – इसका प्रभाव मल विसर्जनी नाड़ियों पर पड़ता है। अतः शौच शुद्धि के लिये, आँतों की पुष्टि के लिये व अपान शोधन के लिये उत्कृष्ट है।

समय – आधे मिनट से आरम्भ करके शरीर के बलाबल को देखकर शनैःशनैः अभ्यास बढ़ायें व कम से कम 10 मिनट तक ले जायें। अवश्य लाभ होगा।

इसका विपरीत क्रम – इस आसन को उल्टा लेटकर भी किया जाता है। मुक्त पद्मासन लगाकर उल्टा लेट जायें, पैरों के दोनों अंगूठे उसी प्रकार से दाहिने हाथ से बायें पैर का अंगूठा व बायें हाथ से दाहिने पैर के अंगूठे को पकड़कर ऊपर की ओर खेंचें। पेट, छाती व शिर को जितना ऊपर की ओर उठाया जा सके उठायें शिर को पीछे की ओर इतना मोड़ें कि पीछे की ओर देखने का प्रयत्न करने पर दिखाई दे। यह इसी आसन का उल्टा लेटकर करने से विपरीत क्रम है। अन्तर केवल इतना ही है कि जब साधक अपने पैरों के अंगूठों को पकड़कर ऊपर की ओर खेंचेगा तो पीछे लगी हुई मुक्त पद्मासन वाली पालथी भी कुछ ऊपर को अवश्य उठ जायेगी।

समय – पूर्ववत् शनैःशनैः बढ़ायें, प्रथमाभ्यास में जल्दी न करें।

लाभ – सभी पूर्वोक्त हैं, केवल इस विपरीत क्रम में भूख अधिक लगती है, क्योंकि इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

गुरु बन्दना

प्रेषक – आशुतोष मिश्रा

चाहत हुई कि अमर कीर्ति रच
अमर हो जाऊँ अवनि पर
पर यह क्या इस अवनि पर तो
सूई के नोंक बराबर भी स्थान रिक्त नहीं,

यहाँ ढेरों कीर्तिमान पहले से
धुमिल पड़े हैं।
हर अमर कीर्ति कैसे काल के साथ
मिटती जा रही है।

हर योद्धा कैसे भ्रम पाले हुए मर मिटते हैं,
संग्राम में अमर होने के लिये
इन कीर्ति को भी अब पाने से क्या लाभ
जब इनके बोझ तले दब जाऊँ।

हर काल में अनेक त्रिदेव आये और गये
फिर वे कीर्ति के साथ अमर न हो पाये
तो आम पुरुषों का कहना की क्या ?

हे बुद्धिमान पुरुषो कीर्ति की छाया को
ज्ञान के प्रकाश से मिटा दो, हर वो
वैभव छोड़ते जाओ जिनसे तू काल
कवलित हो जा , या काल का
डंक तुझे ना लगे।

तू अजर है अमर है फिर किसका

भया जो तू अपने पीछे कीर्ति को
छोड़े जा रहा, जो अतीत बन तेरे स्वभाव
में रह तुझे सदैव उलझाये रहेंगी
इस माया में,

जिन माया के साथ तू खेलता है
आज वो माया तुझसे खेलेगी

अगर पाना है तुझे निश्छल प्रेम
व भक्ति तो त्याग मोह हर ज्ञान का
जो आडम्बर बन तुझे सतावे,

ज्ञान तो इनसे रहित है फिर तू इनमें
कैसे पड़ गया,

सो तू उठ और विस्मृत कर दे
उस अनुभव को जो
तुझे अमर बनाने के लालसा दे
और आगे बढ़ कर तू निश्चल
प्रेम को स्वीकार कर परम शांति को प्राप्त कर।।

(2)

तेज की नगरी है हमारी
जिसे प्यार से बुलाते हैं मणिपूर
मणि के समान प्रकाशमान है वह
उसका देव हूँ मैं, रूप है मेरा नील वर्ण
प्रधान शस्त्र हैं हमारे प्राण, सोम को सोख
प्राण में शक्ति भरता हूँ मैं,

जीवन को बनाये रखने में
निभाता हूँ प्रमुख भूमिका
सो लोक कहते हैं मुझे पालन कर्ता
मुझे धारण कर भक्त बनते हैं प्राणवान,
ओजवान संचालनकर्ता इस नगरी में
वास करने वाला
बनता है गगन सहचरी
गान करते हैं उसके सभी
और जाता है वह शिवलोक (अनाहत) को।।

●●●

दह्यन्ते ध्यायानानां धातूनां हि यथा मला:।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषा: प्राणस्य निग्रहात्।।

अर्थात् अग्नि से तपाये जाने पर जैसे धातु का मल जल जाता है, उसी प्रकार प्राणवायु के निग्रह से इन्द्रियों के सारे दोष दग्ध हो जाते हैं।

(महाराज मनु)

फूल तुम ना बने

– विजय शर्मा, सहारनपुर

तर्ज – ऐसी लागी लगन

फूल तुम ना बने, शूल जग को दिये
गुरु चरणों से मन को, हटाता गया

प्रभु को माना नहीं, खुद को जाना नहीं
नाम दिल से भुलाया, खुद को मोह में फंसाया
कदम आगे से पीछे हटाता गया.... फूल तुम ....

छोड़ा सत कर्म को, किया दुष्कर्म को
मन्त्र जप ना किया, ध्यान कभी ना किया
जीवन यूँ ही निरर्थक गंवाता गया.... फूल तुम....

योग साधन मिले, उनको कभी ना किये
योगी बन ना सका, रोगी बनता गया
तन को भोगों का घर तू बनाता गया .... फूल तुम ....

गुरु जी के चरणों में आ, गीत प्रभु जी के गा
होगी तन की शुद्धि, निर्मल होगी बुद्धि
मिलन प्रभु से तेरा एक दिन हो जायेगा .... फूल तुम ....

अनाचारी बढ़े, सदाचारी घटे
दुष्ट हँसने लगे, सन्त रोने लगे
ध्वजा धर्म की फहराने प्रभु आयेंगे .... फूल तुम ....

प्रभु जी के सन्मुख खड़ा, फिर भी मनमुख चला
मंजिल जानी नहीं, आज्ञा मानी नहीं
अपने हाथों से नैय्या, डुबोता गया .... फूल तुम ....

जै जै राम रघुराई

लेखिका – श्रीमती शारदा सिसौदिया, इन्दौर (म.प्र.)

जय जय राम रघुराई
सुनो सुनो रे भाई
जै जै राम रघुराई
जिन्होंने एक सुन्दर गुफा बनाई,
जिसका नाम है धाम संवाई
जै जै राम रघुराई
जहाँ विराजे हमरे करतार
श्री रामलाल महाराज रघुराई
जिन्होंने गुफा से योग की दुंदभी बजाई
गुरुदेव ने सारे जहाँ मे योग पताका फहराई
जै जै राम रघुराई जै जै राम रघुराई
जाओ देखो मन विश्वास से भर जाई
योग की धारा में डूब जाई
सकल मनोरथ पूर्ण हों
जीवन बने पूर्ण सुख दाई
लूट लो पुण्य कमाई
मानव जीवन सफल हो जाई
जै जै राम रघुराई
हमारा पवित्र धाम संवाई
सकल ब्रह्मांड की करे अगुआई
जै जै राम रघुराई,
जै जै राम रघुराई
हमारा पवित्र धाम संवाई
जहाँ से प्रभु ने अनंत चैन की वंशी बजाई
जिससे जीवन जीने की तमना जाग जाई
हर भक्त ध्यान की तरंग में खो जाई

सुनो रे भाई जै जै राम रघुराई
साथ में विराजे चन्द्रमोहन सरकार
योगियों के सरताज
सकल ब्रह्मांड के प्रणेता
दीनों के दीना नाथ
जिन्होंने हर भक्त के मन में
योग की उमंग जगाई
धारणा, ध्यान की सुरसरि में डूब जाई
मानव जीवन सफल हो जाई
चंचल मन क्षण–क्षण भटक जाई
तुम्हीं हाथ थाम लो मेरे गोंसांई
श्रद्धा भक्ति के प्रसून से हम करे
गुरुदेव के चरणों की सेवकाई
बंदउँ गुरु चरण कमल सुखदाई
हमारे प्रभुदेव की प्यारी–प्यारी प्रभु ताई
सुमिरत नाम संकट कट जाई
कर ले प्रभु की सेवा
मानव जीवन सफल हो जाई
जै जै राम रघुराई, जै जै राम रघुराई
हमारा पवित्र धाम संवाई
उसकी महिमा शब्दों में नहीं कही जाई
जै जै राम रघुराई
जै जै राम रघुराई

सद्गुरु महिमा

– कन्हैया लाल शास्त्री, मुकुल, ललितपुर (उ. प्र.)

करें हम उन प्रभु के गुणगान। दया दे जिनकी जीवन–दान।।
यम के सेवक डरकर भागें, आवे निकट न काल।
हो जाता उद्धार मौत से, दुखिया होत निहाल।।
कष्ट का रहे न नाम निशान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
बिगड़े काम बना देते हैं, रखें स्वजन की बात।
पहुँचा देते उच्च शिखर पर, सरसा कर से गात।
सुमंगल का दें बना विधान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
दुश्मन भी तज वैरभाव को, आन मिलावे हाथ।
बात छोड़िए अपने जन की, पर जन देते साथ।।
सुखद हो जाता अभ्युत्थान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
दुर्घटनायें टल जाती हैं, लिए नाम अभिराम।
धर्म कमाई आती है घर, आनन्द हो अविराम।।
सर्वदा रहता मुख मुसकान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
हर लेते अज्ञान–तिमिरधन, देकर ज्ञान–प्रकाश।
दर्श करा दें जगत पिता के, भर दें उर उल्लास।।
योगयोगेश्वर महिमावान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
जिसका नहीं सहायक कोई, उसको लें अपनायें।
दलिको द्वारक, मृदुफल दायक, सकल भाँति सुखदाय।।
द्वन्द्व का देते कर अवसान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
सच्चे मन से सुमरें जो जन, पहुँचें सद्गुरु पास।
व्यथा मेट के पार लगादें, करें पूर्ण अभिलाष।।
बनादें सुन्दर सुखद विधान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
अष्टसिद्धि नवनिधि के दाता, सिद्धों के भी सिद्ध।
सद्गुरु भूषित अनन्त श्री हैं ''रामलाल'' वर बुद्ध।।
अशरण शरण दाता भगवान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
अजर–अमर हैं अन्तर्यामी, अविनाशी शिवरूप।
घट–घट वासी, योग–प्रकाशी, उद्धारक भव कूप।।
मृत्युञ्जय, सकल सौम्य निधान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।
'मुकुल' मनोरथ पूरे कर दें, प्रभुवर परम उदार।
कविता कर दें, लेख लिख दें, नौका खेवन हार।।
पतित पावन हैं करुणावान। करें हम उन प्रभु के गुणगान।।

सिद्धयोग मासिका (पत्रिका) का विवरण

फार्म नं. 4

1. प्रकाशन का स्थान	–	श्री सिद्धगुफा, संवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)
2. प्रकाशन का अवधि क्रम	–	मासिक
3. मुद्रक का नाम	–	दासलाल शर्मा
राष्ट्रीयता	–	भारतीय
पता	–	श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा (उ.प्र.)
4. प्रकाशक का नाम	–	दासलाल शर्मा
राष्ट्रीयता	–	भारतीय
पता	–	श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा (उ.प्र.)
5. सम्पादक का नाम	–	दासलाल शर्मा
6. स्वत्वाधिकारी	–	दासलाल शर्मा

मैं दासलाल शर्मा एतद् द्वारा यह घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है।

30 जनवरी, 2016

दासलाल शर्मा

कृते, सिद्धगुफा प्रकाशन, सवांई (एत्मादपुर), आगरा

बार-बार प्राण रक्षा

– श्री जगदीश राए बंसल

लेखनी तेरी लेख भी तेरा, तेरा ही गुणगान।
मैं तो धौंकनी लोहार की सांस लेत बिन प्राण।।

हमारे एक 70 वर्षीय गुरु भाई का नाम श्री विष्णु दत्त शर्मा है। इनकी धर्म परायणा पत्नि का नाम श्रीमती सरोज शर्मा है। अध्यात्मिक श्रद्धा से ओत–प्रोत यह हरियाणवी दम्पत्ति अपने इकलौते सुपुत्र, पुत्र वधु, पौत्र एवं पौत्रियों के साथ वर्षों से देश की राजधानी दिल्ली में रह रहे हैं। श्री शर्मा जी मूल रूप से गांव कुराना के रहने वाले हैं। इन्होंने कुराना गाँव में ही झन्डू के बाग में सन् 1952–53 में दीक्षा लेने का सौभाग्य प्राप्त किया था।

यह भाग्यशाली गाँव कुराना अपने आराध्यदेव जी की जन्मस्थली अलुपुर धाम से चार किमी. के अन्तर पर लगता गाँव है। बताते चलें इस गाँव में गुरुजी महाराज महिनों का कार्यक्रम रख लेते थे। कुराना निवासी आदरणीय गुरु भाई बहिन इस कार्यक्रम की परम्परा को, भाग्य विधाता पूज्यपाद श्री गुरुदेव महाराज जी के कृपा पात्र एवं लाड़ले शिष्य, परम पूज्य आचार्य ब. श्री दासलाल जी महाराज की अध्यक्षता में आज भी निभाया हुए हैं। कुराना के शिव मन्दिर में बने श्री प्रभु जी के कमरे में विराजमान योग योगेश्वर आनन्द कन्द महाप्रभू श्री रामलाल जी महाराज एवं आराध्यदेव गुरु श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के स्वरूपों की नित्य दोनों समय आरती पूजा की जाती है। इसके साथ लगते कमरे में एक गुप्त गुफा है। कार्यक्रम अवधि में यहाँ के गुरुभाई बहिनों का प्रेम रस आगन्तुकों के हृदय को जीतने से नहीं चूकता है।

कुराना गाँव में गुरु जी द्वारा योग प्रचार के समय अखिलात्मा त्रिजग पावन बांके बिहारी जी के बृज जैसी योग वर्षा होती थी। प्रसंग योग प्रणेता गुरु जी महाराज अपने प्रवचनों में कई बार बतलाया करते थे कि 'कुराना संकीर्तन का दिव्य प्रभाव केवल मनुष्यों में ही नहीं अपितु पशुओं में भी देखने को मिलता था। सायं काल के समय जब जोर–जोर से आरती होती थी तो 'प्रभो पाहि आपन्न मामि शम्भो' की ध्वनि बहुत देर तक बोली जाती थी। उस ध्वनि में मनुष्यों के साथ–साथ पशु भी ध्यानस्थ हो जाते थे।'' गाँव का एक किसान सायं के समय गुरुदेव जी के पास आकर कहने लगा कि ''आप यह नमामि शम्भो कहना छोड़ दें इससे मेरी हानि हो रही है। यह ध्वनि सुन कर मेरा बैल स्थिरता से खड़ा हो जाता है, आँखें ऊपर चढ़ा लेता है। लाख कोशिश करने पर भी टस से मस नहीं होता। उतनी देर के लिए मेरा कार्य रुक जाता है...।'

इस गाँव में सर्वप्रथम आनन्दकन्द गुरु देव जी महाराज ने सन् 1953 में पूज्य पं. हर प्रसाद जी शर्मा (अध्यापक) के निवास पर रहकर योग प्रचार कार्यक्रम चलाया था। पं. हर प्रसाद जी के दीक्षा लेने के पश्चात्, गाँव के और भी सम्भ्रान्त श्रद्धालु श्री गुरु चरणों से जुड़ गए।

मास्टर जी की ध्यानावस्था बहुत अच्छी थी। सिद्ध शिरोमणी गुरुदेव महाराज जी ने आदरणीय मा. जी को त्राटक सिद्ध करवाया था, जिससे मा. जी को अनेकानेक अनुभूतियां होने लगी। वे रात्रि के घोर अन्धकार में स्पष्ट रूप से देख लेते थे। यहाँ तक कि एक कक्ष में रहकर दूसरे कक्ष का सब कुछ देख लेते थे। इस विषय में योग सम्राट गुरुदेव महाराज से पूछने पर, स्वयं को श्रेय न देकर 'मैय्या मैं नहीं माखन खायो' की तरज पर यही कहते थे कि इसे एक प्रकार की दिव्य दृष्टि मिली हुई है। अपने सभी गुरुभाई अच्छी तरह जानते ही हैं कि सर्व सिद्ध शक्ति दाता अपने प्रवचनों में समझाया ही करते थे कि–

यस्मिन देशे वसे योगी, ध्यान योग विचक्षण:।

सो अपि देशो भवेत पूत, किम पुनः तत् बान्धवा।।

इस प्रकार योग साधना के चलते पूज्य मा. जी अपनी नब्बे वर्ष की भरपूर आयु में विकासपुरी नई दिल्ली स्थित एक नर्सिंग होम में अपने उपचार के चलते 'अच्छा डॉक्टर साहिब हम चलते हैं। हरी ओउम कह कर गुरुधाम को सिधारे।

कालचक्र, युगचक्र और जगचक्र को एक साथ चलाने वाले चराचर के स्वामी गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की इस श्रद्धेय परिवार पर अनेकानेक कृपाएँ हैं, जो गुरुदेव के लाड़ले शिष्य श्री विष्णु दत्त शर्मा द्वारा बतलाई गई हैं। मैं उन्हीं के शब्दों में मुख्य–मुख्य कृपाएँ लिखने का प्रयास कर रहा हूँ कि–

जब भाग्य विधाता गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज ने सन् 1953 में मेरे पूज्य पिता श्री हर प्रसाद शर्मा के पास सर्वप्रथम कुराना में पदार्पण किया, उस समय मेरी आयु मात्र तेरह वर्ष की थी। गुरु जी द्वारा होने वाले कार्यक्रमों से मैं बहुत प्रभावित हुआ। परिणामत: मैट्रिक कक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात्, मुझे छः माह तक श्री चरणों में रहने का सुअवसर प्राप्त हुआ। मैं स्वयं को भाग्यशाली कहूंगा कि जन्मभूमि अलुपुर धाम के कार्यक्रम की अवधि में मुझे गुरुदेव के साथ बिस्तर पर पिता–पुत्र की तरह रात्रि विश्राम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसी प्रकार श्री सिद्धगुफा सवांई धाम में गुरु जी महाराज के कर कमलों द्वारा बनाया गया भोजन प्रसाद खाने को नसीब होता रहा। पश्चात् किन्हीं घरेलू कारणों से आराध्यदेव जी ने मुझे घर (कुराना) वापस भेज दिया। घर लौटने के शीघ्र बाद सन् 1965 में मुझे दिल्ली में सरकारी सर्विस मिल गई और योग योगेश्वर जी की आज्ञा से ही मैं श्रीमती सरोज के साथ प्रणय सूत्र के बन्धन से बँध गया।

मुझे सरकारी नौकरी मिलने और शादी हो जाने के पश्चात् कुछ वर्षों तक गुरु कृपा से हमारा आनन्दमयी जीवन व्यतीत होता रहा। परन्तु यकायक मुझे मिर्गी के दौरे पड़ने आरम्भ हो गए। पहले पहल वर्ष में एक बार, फिर छः माह में, फिर एक माह में और फिर 15 दिनों में यह दौरा पड़ने लगा। हम बहुत परेशान हुए। कई अच्छे–अच्छे अस्पतालों में इलाज कराया, फिर देशी वैद्य–हकीमों पर निर्भर रहे, फिर ज्योतिष पत्रों की भी शरण ली। मगर ज्यों–ज्यों इलाज कराया त्यों–त्यों मर्ज बढ़ता ही गया। इसी उहा–पोह के मध्य जगत नियन्ता, करुणा सागर,

योगयोगेश्वर गुरु श्री चन्द्रमोहन जी के श्री चरणों में हमारी प्रार्थनाओं के चलते, अनाथ नाथ दिल्ली आश्रम में पधारे। मैं और मेरी धर्म पत्नी, परम ब्रह्म विश्वनाथ के दर्शनार्थ आर.के. पुरम आश्रम में गए। वहाँ मेरी धर्मपत्नी श्री गुरु चरणों को पकड़ कर भावुक हो उठी। दया सागर, आशुतोष महाराज ने इस प्रकार रोने का कारण पूछा, तो श्रीमती जी ने मेरी बीमारी की सारी व्यथा कह सुनाई और इसके साथ–साथ इस रोग के निवारणार्थ अपने नयनों की माला भी श्री चरणों में अर्पित कर दी कि (तर्ज–गाड़ी आले...)

गुरुदेव हमारे, रोग भगा दे, दया की दृष्टि डाल,

गुरु जी मैं हार गई।....

यह सब सुनकर संकट मोचन गुरुदेव ने मुझे अपने गले से लगा लिया और कल प्रातः कालीन आरती में उपस्थित रहने की आज्ञा दी। गुरु आज्ञा शिरोधार्य कर मैं प्रातः आरती में शामिल रहा। आरती के पश्चात् जगत नियन्ता ने मुझे अपने पास बुलाया और पुष्प प्रसाद देकर कहा कि लल्ला इसे तुम अभी मेरे सामने खा लो। मैंने वह पुष्प प्रसाद तुरन्त खा लिया। आराध्यदेव जी फिर बोले, तुम कल के लड़के पता नहीं क्या–क्या बीमारी पाल लेते हो? वरदाता की कृपा से आज तक मुझे कोई दौरा नहीं आया। मुझे लगता है कि रिद्धि–सिद्धि के स्वामी अखण्ड मण्डलाकार ने इस बीमारी से मुझे आजीवन मुक्त कर दिया है। मैं तो बार–बार यही गाता रहूंगा कि –

बंदऊं गुरु पद पदुम परागा,

सुरुचि सुवास सरस अनुरागा।

अमिय मूरिमय चुरन चारू,

शमन सकल भवरूज परिवारू।।

कृपा नं. 2, अब हम पहले की भांति सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे थे कि अचानक मुझे जुलाई 1991 में बांयी किडनी के ऑपरेशन के लिए दीनदयाल उपाध्याय अस्पताल में ले जाया गया। हम बहुत डरे हुए थे और अनवरत पालनहार सर्व समर्थ के श्री चरणों में आर्त पुकार कर रहे थे कि –

गहरी प्यास को मिठा जल पिलाते गुरु जी।

हमें बीमारी का हल, दिलाते हैं गुरु जी।।

अपने आत्मज को उज्जवल बनाते गुरु जी।

आजीवन सुरक्षा गारन्टी देते हैं गुरु जी।।

मेरे द्वारा गुरु मन्त्र जाप करते–करते ऑपरेशन रूम में ले जाया गया। लीलाधर की लीला तो देखिए कि न जाने कब मेरा ध्यान लग गया। मैं स्वयं को ब्रह्माण्ड में लेटा देख रहा हूँ। मेरे सिर की तरफ भव भयहारी, अखण्ड मण्डलाकार मेरे प्राण गुरुदेव जी महाराज पद्मासन

से विराजमान हैं। दयालु जी अपना दांया हस्त उठा कर आशीर्वात्मक हितोपदेश कर रहे हैं कि 'लल्ला चिन्ता ना करो हम तुम्हारे साथ हैं।' मेरा आपरेशन सफल हुआ। इस प्रकार गुरुदेव भगवान ने मेरी प्राण रक्षा की।

अपने ज्ञानी बाबा एक भजन गाया करते थे कि –

गुरु चन्द मोहन करतार,

तुम्हारी महिमा अपरम्पार,

भेद तेरा पाया ना...

कृपा नं. 3 – किडनी ऑपरेशन के पश्चात् हम अपना महत्त्वाकांक्षी जीवन व्यतीत कर रहे थे कि सन् 2000 में मुझ पर विपत्ती का पहाड़ टूट पड़ा। मेरे दिमाग की नस बन्द हो गई। परिणामतः मैं पूर्ण रूपेण असहाय हो गया। यहाँ तक कि हिलना–डुलना भी दुर्लभ हो गया। मुझे भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) में ले जाया गया। एम्स के निपुण चिकित्सकों द्वारा एक सप्ताह गहन अध्ययन एवं चिकित्सा के पश्चात् मुझे लाइलाज घोषित करके, मेरे हाल पर रिलीव कर दिया। इस व्याधि से परिवार, रिश्तेदार एवं मित्रगण मेरे जीवन की आशा छोड़ चुके थे। प्राणदाता की शरण के अतिरिक्त आशा की कोई किरण दूर–दूर तक नहीं थी। श्री चरणों में हम यही पुकार रहे थे कि–

दया करो गुरुदेव, हम पर दया करो।

हालत है कमजोर आ कर उपचार करो।।

दुनियां के तूने काज संवारे मेरे भी प्राण बचाए थे

रोते रोते आए थे हम, हंसते हंसते लौटाए थे

वैद्यों के तुम वैद्यराज हो, मुझ को बूंटी पिलाया करो।

दया करो...

विविध दुआओं के चलते क्षण भर के लिए एक विचार यह भी आया कि अगर मेरा क्लिष्ट संस्कार आया है, जिसे भाग्य विधाता टालने के स्थान पर भुगतान ही करना अपनी रजा समझते हैं तो श्री चरणों में शत्–शत प्रणाम के साथ मेरी भी एक रजा है जिसे गुरु देव जी पूरा करें–

छोटी सी अर्जी मेरी, योगेश्वर जी स्वीकार करो।

संस्कार गर भुगताना है तो मेरा उद्धार करो।।

ध्यान तेरा करते–करते तुझमें ही खो जाऊं मैं

तेरी गोद में हे सिद्धेश्वर, छत फोड़ मर जाऊं मैं

एक टकी से तुझे निहारूं, मेरे सिर पर हाथ धरो

छोटी सी...

आ गई लहर शिवा के मन में –

लीला धारी की लीलाओं को कौन समझ सकता है? अब मुझे एक निजी अस्पताल विमन्ज में ले जाया गया। वहाँ के विशेषज्ञ डॉ. एल. के. मल्होत्रा ने चिकित्सा करने की हामी भर ली। इलाज शुरू हो गया। पहले की अखण्ड मण्डलाकार गुरुदेव भगवान मेरे सिर की ओर अपना आसन लगाए विराजमान थे। मैं गुरु मन्त्र में लीन था और लीनता में ही गुरु जी द्वारा दिया जा रहा आशीर्वाद स्पष्ट सुन रहा था। इस प्रकार बिना किसी ऑपरेशन के ही प्राण दाता ने मुझे जीवन दान दिया।

सुन कर आर्त पुकार गुरु जी आते हैं।
करते हैं शक्ति संचार प्राण बचाते हैं।।

कृपा नं. 4 – सिद्धों के सम्राट, अनादी सिद्ध गुरु चन्द्रमोहन जी महाराज द्वारा हम पर आनन्द सरोवर के बादल बरसते–बरसते मेरे जीवन में बार–बार ठोकरें आती रहीं। मैं इसे अपने भाग्य की विडम्बना ही कहूंगा कि मेरा जीवन विपत्ति की परिभाषा है। हुआ यह कि अब की बार मुझे दिल का दौरा पड़ा। दो दिसम्बर 2008 को महाराजा अग्रसेन अस्पताल में दिल का ऑपरेशन हुआ परंतु –

स्वाल बीमारी का नहीं, जिन्दगी का होता है।
स्वाल पानी का नहीं, प्यास का होता है।।
दुआएँ तो मिल जाती हैं आप मेहरबानों से
स्वाल जीवन दान का होता है।

और यही हुआ, मुझ पर पहले हुई कृपाओं के अनुरूप ही सर्व समर्थ स्वयं नारायण गुरुदेव महाराज ने मेरा ऑपरेशन सफल कर मुझे पुनः जीवन दान दिया। अब मैं गुरु कृपाओं के दम पर पूर्ण स्वस्थ्य हूँ। दिनांक अक्टूबर 2000 में सहायक दुग्ध योजना अधिकारी के पद से निवृत्त होकर वर्तमान में स्थानीय अपने आश्रम आर.के. पुरम् में महा सचिव की सेवा में रत आपकी दुआओं के मध्य हँसता–झूमता गुनगुनाता रहूंगा–

अनेक जन्म संप्राप्तं कर्म बन्धविदा हिने।
स्वात्म ज्ञान प्रदानेन तस्मै श्री गुरवे नमः।।

●●●

सिद्धयोग

आय-व्यय का विवरण वर्ष - 2015-2016

आय		व्यय	
पिछला बैंक में जमा	306062/-	कागज व छपाई	153235/-
पिछला रोकड़	849/-	कार्यालय खर्च	15000/-
वार्षिक शुल्क	155147/-	चैक निस्तारण	28/-
सहयोग राशि	59409/-	जमा बैंक में	372685/-
मनी आर्डर से	4940/-	नकद हाथ में	4110/-
बैंक ब्याज से	15281/-		
ऑनलाइन द्वारा प्राप्त	3370/-		
कुल योग -	545058/-	कुल योग -	545058/-

सहयोग राशि दाताओं की सूची - मार्च 2016

नाम	पता	राशि
रजनीश वाचस्पति	नांगल पंजाब	1100/
ओमवती शर्मा	म.नं. 788, मो. श्रीनगर, हापुड़	500/-
पं. कृष्ण पुत्र श्री सत्यनारायण	धनाना ,सोनीपत, हरियाणा	1101/-
गोलू सोनी	अमेठी	100/-
एस.एस.दहिया	1903/7, करनाल, हरियाणा	500/-
जसवन्त सिंह पुत्र हरकेश	ग्राम गुढा, घरोण्डा, करनाल	500/-
कर्मवीर पुत्र श्री किशन सिंह	ग्राम गुढा, घरोण्डा, करनाल	500/-
वीरेन्द्र पाल	म.नं. 1450 से. 7 , करनाल	500/-
प्रकाश सिंह तोमर	धनोली, आगरा	5100/-
शिवचरण	फुलाना, हरियाणा	1100/-
श्री दिलीप चौधरी	विष्णु पुरी कॉलोनी, इन्दौर	1001/-
दुर्गा सेवक पाण्डेय	बैतूल, मध्य प्रदेश	2000/-
ललित शर्मा	कालका, हरियाणा	2000/-
निर्मल कुमार कुलश्रेष्ठ	बाडा, ग्वालियर, मध्य प्रदेश	200/-
नन्दकिशोर पुत्र प्रवीण कुमार	शामली (मु. नगर)	1100/-
कमलेश कुमार गुप्ता	इन्द्रा नगर, लखनऊ	2101/-
राजेन्द्र गोयल (अकाउन्टेन्ट)	गंगापुर सिटी (राज.)	500/-
श्रीभगवान गौतम	जीन्द, हरियाणा	301/-
पुरुषोत्तम गुप्ता	जीन्द, हरियाणा	101/-
मा. मंगल दत्त शर्मा	शेखपुरा खालसा, करनाल, हरियाणा	500/-
ओंकार नाथ श्रीवास्तव	सरोजा जमालापुर, जौनपुर (उ.प्र.)	1100/-
योग प्रचार मण्डल	गुहाना, हरियाणा	2100/-
सुरेश कुमार शर्मा	गुहाना-सोनीपत (हरियाणा)	1100/-
अशोक सैनी	गुहाना हरियाणा	500/-
लल्लू सिंह	बलिया, उ.प्र.	500/-
त्रिपुरारी पाण्डेय	बलिया, उ.प्र.	5000/-
रामचन्द्र मलिक पुत्र श्री गजजाव सिंह	बल्ला, करनाल (हरियाणा)	1100/-
शान्ता शर्मा	अम्बाला	2100/-
रोशन लाल शर्मा	भट्टु फतेहाबाद, हरियाणा	500/-
रमेश चन्द	सिरसा, हरियाणा	500/-
जयकुमार मार्तण्ड	हरियाणा	500/-
जे.पी. गुप्ता	गंगापुर सिटी	501/-
कलीराम गर्ग	दिल्ली	500/-
साहब सिंह	उमरी, उ.प्र.	501/-
शिव नरेश मिश्रा	मैनपुरी	501/-
सुरेश चन्द खरे	झाँसी	2100/-
दिलीप चौधरी	इन्दौर	501/-
	योग	59, 409/-

आश्रम समाचार

माघ मेला, प्रयागराज

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी प्रयागराज में माघ मेला का आयोजन रखा गया। 14 जनवरी 2016 से 23 जनवरी तक यह शिविर लगा रहा। 08 फरवरी को मौनी अमावस्या के साथ –साथ सोमवती अमावस्या के कारण उस दिन भीड़ बहुत रही। अमावस्या को स्नानार्थियों की संख्या एक करोड़ से अधिक पहुँच गई थी। आश्रम शिविर में प्रतिदिन ध्यान–योग अभ्यास, योगासन तथा दो अध्याय श्री मद्‌भगवदगीता के पाठ किये जाते थे। गीता के अध्यायों का श्री सिद्धगुफा सवाई धाम से पधारे आचार्य डॉ. दासलाल जी महाराज द्वारा सरल भाषा में योग परक भावार्थ समझाया जाता था। आश्रम की अन्य शाखाओं से आने वाले भक्तों में जयपुर से श्री मनोहर तिवारी जी, काँगड़ा से विजयपुरी जी अपनी मण्डली के साथ शिविर में सम्मिलित हुये। शिविर में श्री सद्‌गुरुदेव जी के समय की याद ताजी हो जाती है। शिविर मे भोजन व आवास की समुचित व्यवस्था थी। व्यवस्था में श्री दशरथ तिवारी जी व चन्द्रवली दूबे का सहयोग उल्लेखनीय रहा।

07 फरवरी से 13 फरवरी बसंत पंचमी तक श्रीमद्‌भागवत् महापुराण की कथा एवं ज्ञान यज्ञ का आयोजन किया गया। कथा व्यास आचार्य धर्मेन्द्र शास्त्री वृन्दावन वाले थे। इस प्रकार से सभी साधकों ने विभिन्न कार्यक्रमों में शामिल होकर पुण्य लाभ प्राप्त किया।

शोक संवेदना

- कालपी निवासी श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता की धर्मपत्नी श्रीमती मुन्नी देवी का 26 जनवरी को देहावसान हो गया है। इस दु:ख की वेला में दु:खी परिवारिजनों को सिद्धयोग परिवार अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करता है।
- इलाहाबाद निवासी श्री चन्द्रवली दूबे की धर्मपत्नी का लम्बी बीमारी के बाद 12 फरवरी को निधन हो गया है। श्री दूबे जी का माघमेला की व्यवस्था में सक्रिय योगदान रहता है। इस दु:ख की वेला में आश्रमवासी परिवारजनों को हार्दिक संवेदना प्रेषित करते हैं।
- श्री सिद्धगुफा सवाई आश्रम के एक पुराने साधक श्री विनोद कुमार शर्मा का 14 फरवरी को देहान्त हो गया है। वे आश्रम के पुराने सेवक थे। अनेक वर्षों तक आश्रम की विभिन्न प्रकार की सेवायें की। दु:ख सन्तप्त परिवार को आश्रमवासी शोक संवेदना प्रकट करते हैं। श्री प्रभु जी उन्हें शान्ति देकर सद्‌गति प्रदान करें।
- वाराणसी के प्रभु भक्त श्री जे.पी.सिंह की माता का 15 फरवरी को देहान्त हो गया है। वे 98 वर्ष की थीं। उस परिवार को भी शोक संवेदना प्रकट करते हैं।
- कुआरिया वाराणसी के ही माता जी का 17 फरवरी को शरीरान्त हो गया है उस परिवार को भी दु:ख संवेदना प्रेषित करते हैं।

शोकाकुल
आश्रम वासी भक्त

|| श्री रामलाल प्रभवे नमः || || श्रीसद्गुरुदेवाय नमः ||

श्री रामनवमी महोत्सव व श्री प्रभुजी की जयन्ती समारोह 2016

बड़े हर्ष की बात है कि पूर्व वर्षों की भाँति इस वर्ष श्री रामनवमी का महोत्सव योग महा मेला के रूप में अप्रेल दिनांक - 13, 14 व 15 तदनुसार बुध, बृहस्पति तथा शुक्रवार को बड़े धूम-धाम से श्री सिद्ध गुफा सवांई धाम में बड़े ही हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया जा रहा है। सभी गुरुभक्तों से निवेदन है कि उक्त तिथियों में धाम पर आकर सत्संग व पुण्य का लाभ लें। अपने इष्टमित्रों व अन्य गुरुभाईयों तक यह सूचना पहुंचायें। श्री रामनवमी का भण्डारा 15 अप्रेल को रहेगा।

जय गुरुदेव की !

निवेदक
श्री सिद्धगुफा सवांई,
धाम के समस्त साधकगण

'विज्ञातारमरे केन विजानीयात'

–: स्वामी विवेकानन्द :–

विज्ञातारमरे केन विजानीयात – विज्ञाता को कैसे जानोगे? ज्ञाता को कोई जान नहीं सकता, क्योंकि यदि वह समझ में आने योग्य होता, तो वह कभी ज्ञाता न रह जाता और यदि तुम आइने में अपनी आँखों का बिम्ब देखो, तो तुम उन्हें अपनी आँखें नहीं कह सकते, वे कुछ और ही है, वे बिम्बमात्र है। अब बात यह है कि यदि यह आत्मा – वह अनन्त सर्वव्यापी पुरुष साक्षी मात्र हो, तो इससे क्या हुआ? वह हमारी तरह न चल फिर सकता है, न जीता है, न संसार का सम्भोग कर सकता है। यह बात लोगों की समझ में नहीं आती कि जो साक्षी स्वरूप है, वह किस तरह आनन्द का उपभोग कर सकता है। ''हे हिन्दुओ, तुम सब साक्षी स्वरूप हो, इस मत से तुम लोग निष्क्रिय और अकर्मण्य हो गये हो'' – यह बात लोग कहा करते हैं। उनकी इस बात का उत्तर यह है, 'जो साक्षी स्वरूप है, वही वास्तव में आनन्दोपभोग कर सकता है।' अगर कहीं कुश्ती लड़ी जाती है तो अधिक आनन्द किन्हें मिलता है? – जो कुश्ती लड़ रहे हैं उन्हें या जो दर्शक है उन्हें?

इस जीवन में जितना ही तुम किसी विषय में साक्षी स्वरूप हो सकोगे उतना ही तुम्हें उससे अधिक आनन्द मिलता रहेगा। यथार्थ आनन्द यही है और इस युक्ति से तुम्हारे लिए अनन्त आनन्द की प्राप्ति तभी सम्भव है, जब तुम इस विश्व ब्रह्मांड के साक्षी स्वरूप हो सको। तभी मुक्त पुरुष हो सकोगे। जो साक्षी स्वरूप है, वही निष्काम भाव से स्वर्ग जाने की इच्छा न रख, निन्दा–स्तुति को समदृष्टि से देखता हुआ कार्य कर सकता है। जो साक्षी स्वरूप है, आनन्द वही पा सकता है, दूसरा नहीं। अद्वैतवाद के नैतिक भाग की विवेचना करते समय उसके दार्शनिक तथा नैतिक भाग के अन्तर्गत एक और विषय आ जाता है, वह मायावाद है। अद्वैतवाद के अन्तर्गत एक एक विषय के समझने में ही वर्षों लग जाते है और व्याख्या करने में महीनों लग जाते हैं, इसलिए इसका मैं उल्लेख मात्र ही करूँगा। इस मायावाद को समझना सभी युगों में बड़ा कठिन रहा है। मैं तुमसे संक्षेप में कहता हूं, मायावाद वास्तव में कोई वाद या मत विशेष नहीं है, वह देश, काल और निमित्त की समष्टि मात्र है – और इस देश, काल, निमित्त को आगे नाम–रूप में परिणत किया गया है। मान लो समुद्र में एक तरंग है। समुद्र से समुद्र की तरंगों का भेद सिर्फ नाम और रूप में है, और इस नाम और रूप की तरंग से पृथक कोई सत्ता भी नहीं है, नाम और रूप दोनों तरंग के साथ ही है, तरंगे विलीन हो जा सकती हैं; और तरंग में जो नाम रूप है, वे भी चाहे चिर काल के लिए विलीन हो जायें, पर पानी पहले की तरह सम मात्रा में ही बना रहेगा। इस प्रकार यह माया ही तुममें और हममें, पशुओं में और मनुष्यों में, देवताओं और मनुष्यों में भेदभाव पैदा करती है। सच तो यह है कि यह माया ही है जिसने आत्मा को मानो लाखों प्राणियों में बांध रखा है और उनकी परस्पर भिन्नता का बोध नाम और रूप से ही होता है। यदि उनका त्याग कर दिया जाय, नाम और रूप दूर कर दिये जायें, तो वह सदा के लिए अन्तर्हित हो जायेगी, तब तुम वास्तव में जो कुछ हो, वही रह जाओगे। यही माया है। और फिर यह कोई सिद्धान्त भी नहीं है, केवल तथ्यों का कथन मात्र है।

SIDDHYOG Postal Regd. No.: Ag. 19/15-17 Feb-March 2016

प्रेषक कार्यालय :

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
नवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

PRINTED MATTER

श्री/सुश्री ______________________

____

____

□□□□□□

आहारशुद्धौ सत्वशुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः
स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः।।

(छान्दोग्योपनिषद् 7/26/2)

अर्थात् जिसका आहार शुद्ध है, उसकी बुद्धि शुद्ध होती है, सात्त्विकी होजाती है और सात्त्विकी हो जाने से स्मृति दृढ़ हो जाती है और स्मृति के दृढ़ हो जाने से हृदय की सब ग्रंथियाँ खुल जाती हैं और इनके खुल जाने से वह मनुष्य आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करता हुआ भगवान् के चरणों में पहुँचकर आत्मानुभूति प्राप्त कर लेता है।

संस्थापक :- योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज। मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. रामलाल
राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा-3 से मुद्रित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, नवाई (एत्मादपुर
प्रकाशित। आर.एन.आई. नं. UPHIN/2004/14566 सम्पादक : आत्मानंद ब्र. (डॉ.) रा